ISC Paper 2018
Hindi

Maximum Marks: 100
Time Allowed: Three Hours

(Candidates are allowed additional 15 minutes for only reading the paper. They must NOT start writing during this time.)
Answer questions 1, 2 and 3 in Section A and four other questions from Section B on at least three of the prescribed textbooks. The intended marks for questions or parts of questions are given in brackets [ ].

Section-A-Language (50 Marks)

प्रश्न 1.
Write a composition in approximately 400 words in Hindi on any ONE of the topics given below: [20]
किसी एक विषय पर निबंध लिखिए जो 400 शब्दों से कम न हो:

(i) आज की भागदौड़ भरी जिंदगी में आदमी मानसिक तनाव से ग्रस्त है, इसे दूर करने तथा जीवन को खुशहाल बनाने के तरीकों के बारे में अपने विचार प्रस्तुत कीजिए।

(ii) 'कर्म की प्रबल है, भाग्य नहीं'- इस कथन के पक्ष या विपक्ष में अपने विचार प्रकट कीजिए।

(iii) आज के भौतिकवादी युग में त्योहारों का रूप-स्वरूप बदल रहा है। त्योहारों में व्यावसायिकता बढ़ती जा रही है।' इस तथ्य की विवेचना कीजिए।

(iv) 'जीवन में सफलता पाने के लिए कठिन संघर्ष की आवश्यकता होती है'-इस कथन को अपने जीवन के किसी निजी अनुभव के द्वारा पुष्ट कीजिए।

(v) 'नारी घर और बाहर दोनों जगह अपनी भूमिका निभाते हुए नित नई चुनौतियों का सामना करती है।' विभिन्न क्षेत्रों में नारी के योगदान को ध्यान में रखते हुए इस विषय पर अपने विचार लिखिए।

(vi) निम्नलिखित में से किसी एक विषय पर मौलिक कहानी लिखिए:

(a) 'पर उपदेश कुशल बहुतेरे'।

(b) एक ऐसी मौलिक कहानी लिखिए जिसका अंतिम वाक्य हो:

.... काश! ऐसा पल मेरे जीवन में भी आया होता।।

उत्तर-

(i) यह कटुसत्य है कि आज की भागदौड़ भरी जिंदगी में आम आदमी तनावग्रस्त हो रहा है। वह कम समय में अधिक-से-अधिक पाना और बड़े से बड़ा व्यक्ति होना चाहता है। भौतिकवाद ने इसे और भी तनावग्रस्त बना दिया है। हम अपने शारीरिक तथा मानसिक विकास से कोसों दूर होते जा रहे हैं।

मेरे विचार से आज के विभिन्न तनावों से मुक्त होकर स्वस्थ व संपूर्ण जीवन का आनंद लेने के लिए साहित्य, संगीत एवं कला का सहारा लेना चाहिए।

जब से मानव सभ्यता का विकास हुआ है तब से मनोरंजन के नए-नए तरीके अपनाए जा रहे हैं। साहित्य, संगीत एवं कला का मानव जीवन में विशिष्ट स्थान है। इनसे न केवल मनोरंजन होता है अपितु हमारे विकार भी दूर होते हैं। हमें नई प्रेरणाएँ मिलती हैं और हम उदात्त, उदार, सत्याधारित एवं निश्छल जीवन की ओर उन्मुख होने लगते हैं। ये हमारी सद्वृत्तियों को जगाने और पल्लवित करने वाले उपकरण हैं।

सर्वप्रथम साहित्य की बात की जाए साहित्य का अर्थ ही मनुष्य का हित-साधन है। मानव का स्वभाव है कि वह सीधे-सीधे दिए जाने वाले उपदेशों को ग्रहण नहीं करता। वही उपदेश जब निहित संदेश के रूप में साहित्य के माध्यम से दिए जाते हैं तो मनुष्य का साधारणीकरण हो जाता है। वह स्वयं को साहित्यिक परिवेश के अनुसार ढालने लगता है। वह उन स्थितियों, घटनाओं, पात्रों या भावनाओं को हृदय में स्थान दे देता है। उसे खल पात्रों और सज्जनों का बोध होने लगता है। धीरे-धीरे वह सत्साहित्य के माध्यम से अपने आपको ऊपर उठता अनुभव करता है।

कहा जाता है कि साहित्य समाज का दर्पण है। साहित्यकार अपने समाज में जो कुछ भी अच्छाबुरा देखता है उसे अपनी आँख अर्थात् दृष्टिकोण से मंडित और सिंचित करके साहित्य की अलगअलग विधाओं के माध्यम से अभिव्यक्त कर डालता है। उपन्यास, कहानी, कविता, एकांकी, नाटक, संस्मरण, रेखाचित्र, निबंध, रिपोर्ताज आदि विविध विधाओं को अपनाकर साहित्यकार अपनी बात कहता है। इससे न केवल हमारा मनोरंजन होता है अपितु हमारा ज्ञान भी बढ़ता है। हमारे भीतर स्थितियों का सामना करने, समस्याओं का समाधान खोजने और परिवेश के अनुसार आचरण अपनाने की समझ पैदा होती है।

संगीत को एक श्रेष्ठ एवं लोकप्रिय कला होने का गौरव प्राप्त है। संगीत मनुष्य के स्नायु-तंत्र पर सकारात्मक प्रभाव डालता है। इससे हम दिनचर्या के बोझ एवं तनाव से मुक्त हो जाते हैं। प्रायः जन्म से ही मनुष्य को संगीत की समझ होती है। बच्चा जब लोरी सुनता है तो उसे संगीत की समझ नहीं होती। वह अबोध, अपठित तथा अज्ञानी होता है। तथापि उसे आनंद आता है। संगीत का मनुष्य तो मनुष्य पशु-पक्षियों पर भी अनुकूल प्रभाव पड़ता है। यही कारण है कि संगीत का दीवाना हिरण शिकारियों द्वारा फैलाए गए संगीत के जाल में फंसकर अपनी जान गँवा बैठता है।

जिस प्रकार साहित्य समाज का दर्पण है उसी प्रकार कला उसके विभिन्न प्रकार के व्यवहारों की झाँकी कही जा सकती है। आचार्य विभु ने चौंसठ कलाओं का वर्णन किया है। कला हमारे जीवन को निखारती है। यह भावों को प्रस्फुटित करती है। मनुष्य के सुखी जीवन के लिए साहित्य, संगीत और कला अति महत्त्वपूर्ण हैं। साहित्य से ज्ञानवर्धन होता है और कला तथा संगीत से मनोरंजन होता है। कला और संगीत ईश्वर के अलौकिक आनंद की अनुभूति कराते हैं। साहित्य मनुष्य को सत्मार्ग की प्रेरणा देता है। वह उसके चरित्र का निर्माण कर उत्कर्ष पर ले जाता है। कला और संगीत मिलकर अद्भुत आनंद की अनुभूति कराते हैं। हमारे देश की संस्कृति कला और संगीत में छिपी होती है। साहित्य नए समाज का निर्माण करता है। मनुष्य पर साहित्य का प्रत्यक्ष एवं परोक्ष प्रभाव पड़ता है। उसके सर्वांगीण विकास में साहित्य सहायक होता है। कला में नृत्य, चित्रकला, भवन निर्माण, मूर्ति कला, आदि विधाएँ आती हैं।

भारतीय मान्यता है कि जब सरस्वती ने अपने कोमल हाथों में वीणा धारण की तब सामवेद की रचना हुई, और संगीत के सात स्वरों का प्रादुर्भाव हुआ। धीरे-धीरे संगीत की यह परंपरा विदेशों में पहुँच गई और आज हमें संगीत की दो शैलियाँ पाश्चात्य संगीत और भारतीय संगीत के रूप में मिलती हैं। चाहे संगीत किसी भी शैली का क्यों न हो, उसका उद्देश्य मनुष्य को सुख और आनंद प्रदान करना ही होता है। संगीत सुनने व सीखने से मनुष्य को बहुत लाभ होते है।

संगीत के अंदर नवजीवन प्रदान करने की अद्भुत क्षमता होती है। जब थका-हारा मनुष्य कुछ समय संगीत का आनंद प्राप्त करता है तो उसकी सारी थकान दूर हो जाती है और वह स्वयं को तरोताजा अनुभव करने लगता है। गीत-संगीत और नृत्य तो प्राचीन काल से ही मनोरंजन के साधन माने गए हैं। आज भी यदि इस व्यस्त जीवन शैली में मनुष्य रोज सैर-सपाटे के लिए नहीं जा सकता है तो वह अपने घर में ही संगीत का आनंद प्राप्त करके मनोरंजन कर सकता है।

संगीत प्रेरणा स्रोत भी है। यह व्यक्ति को कार्य करने की प्रेरणा भी देता है। यदि हम काम करते समय संगीत भी सुनने जाते हैं तो वह काम जल्दी भी होता है और काम करने में आनंद का अनुभव होता है।

संगीत सुनने से हमारे ज्ञान में वृद्धि भी होती है। संगीत के क्षेत्र के अनेक राग-रागिनियों की जानकारी संगीत को सुनकर ही प्राप्त होती है। गीत, ग़ज़ल आदि को सुनकर समझने से हमारे शब्द भण्डार में भी वृद्धि होती है। अनेक जटिल शब्दों के अर्थ भी हमारी समझ में आते हैं।

शारीरिक दृष्टि से भी संगीत का आनंद मनुष्य के लिए लाभदायक होता है। संगीत की लय पर थिरकना एक प्रकार का व्यायाम है इससे शरीर का रक्त संचार बढ़ता है, संगीत की लय, गीतों के बोल याद रखना, उन्हें सटीक गाना इत्यादि क्रियाएँ मस्तिष्क को भी सुदृढ़ बनाती हैं। अतः हमारे जीवन में साहित्य, संगीत और कला का विशेष महत्त्व है क्योंकि ये तीनों हमारे लिए मनोरंजन, ज्ञानवर्द्धन, उदात्तीकरण तथा प्रेरणा के स्रोत हैं।

(ii) 'कर्म ही प्रबल या प्रधान है, न कि भाग्य'-इस उक्ति को उक्ति न कहकर सूक्ति कहना चाहिए। युगों-युगों से यह स्थापित सत्य स्वीकार होकर बार-बार प्रमाणित हुआ है कि मनुष्य भाग्य के बल पर नहीं अपितु अपने भुजबल अर्थात् कर्म पर चलकर ही सभी प्रकार की सिद्धियों या उपलब्धियों को पाता है।

संसार के सभी चराचरों में मानव निस्संदेह सर्वश्रेष्ठ प्राणी है क्योंकि केवल इसी में मानसिक बल है। केवल मनुष्य ही चिंतन-क्षमता रखता है तथा केवल उसी में संकल्प करके किसी भी असंभव प्रतीत होने वाले कार्य को संभव बनाने में सामर्थ्य विद्यमान है। पुरुषार्थ के बल पर वह क्या कुछ नहीं कर सकता। उसने अपने पुरुषार्थ के बल पर ही आज मृत्यु लोक का नंदन कानन बना दिया है जिसे देखकर स्वयं विधाता भी चंकित हुए बिना नहीं रह पाएगा।

तुलसीदास जी ने ठीक ही कहा है-'कर्म प्रधान विश्व रचि राखा, जो जस करहि सो तस फल चाखा' अर्थात् संसार कर्म प्रधान है। यहाँ अपने कर्मों के अनुसार ही फल प्राप्त होता है। कर्म के कारण ही आज का मनुष्य पाषाण युग से निकलकर अंतरिक्ष युग में आ पहुंचा है। कर्म ही पुरुषार्थ है। इसी पुरुषार्थ के बल पर मनुष्य ने पर्वतों को काटकर सड़कें बना दीं, नदियों का रुख मोड़ दिया, समुद्र की गहराइयों से खनिज निकाल लिए, पृथ्वी के गर्भ में छिपी अनंत खनिज-संपदा को प्राप्त कर लिया, आकाश में पक्षियों की भाँति उड़ने में समर्थ हो गया। यही नहीं दूसरे ग्रहों पर भी उसके चरण पड़ चुके हैं। आज के संसार की समस्त वैभव, सुख, समृद्धि आदि का

कारण मनुष्य का पुरुषार्थ ही है। इन्हीं सब कारणों से मनीषियों का मानना है कि केवल कार्यशील मनुष्य ही समय पर शासन करते हैं। समय भी उन्हीं के रथ-अश्वों को हाँकता है, जो कर्मण्य हैं।

कुछ लोग मानव जीवन में उसकी उन्नति और उपलब्धियों के लिए भाग्य को उत्तरदायी मानते हैं। भाग्यवादियों के तर्क हैं कि जो कुछ मनुष्य के भाग्य में लिखा है, वह अवश्य होकर रहता है। वे कहते हैं-'कर्म गति टारे नाहीं टरे।' भाग्य के कारण ही सत्यवादी एवं महाप्रतापी राजा हरिश्चंद्र को एक नीच के हाथ बिकना पड़ा और श्मशान में नीच काम करना पड़ा। भाग्य के कारण ही श्री राम जैसों को जंगलों की खाक छाननी पड़ी, भाग्य के कारण ही पांडवों को वनवास में अनेक कष्टों का सामना करना पड़ा और दुर्योधन जैसे अहंकारी ने काफ़ी समय तक सुख भोगा। यदि भाग्य बली न होता, तो भीम जैसे महायोद्धा को विराट के यहाँ रसोइए का काम न करना पड़ता।

कुछ लोग भाग्यवादी होते हैं, तो कुछ पुरुषार्थ के समर्थक। दोनों के अपने-अपने तर्क हैं। पुरुषार्थ पर विश्वास करने वाले कहते हैं कि यदि अब्राहम लिंकन भाग्य के भरोसे बैठा रहता, तो अपने पिता के साथ जीवन भर लकड़ियाँ काटने का काम करता रहता, स्टालिन जीवन भर अपना पैतृक व्यवसाय जूते बनाने का कार्य करता, नेपोलियन कभी विश्व विजेता न बन पाता। भाग्यवादी भी इसी प्रकार के अनेक उदाहरण देकर अपने पक्ष का समर्थन करते हैं। वे कहते हैं कि राम के विवाह का शुभमुहूर्त वशिष्ठ जैसे महाज्ञानी ने निकाला था, पर विवाह के तुरंत बाद वन गमन, फिर दशरथ की मृत्यु और बाद में सीता का हरण भाग्य के कारण ही हुए। इसीलिए भाग्यवादियों का कहना है कि 'अदृश्य की लिपि ही भाग्य है'

दोनों पक्षों का अवलोकन करने के पश्चात् यह निष्कर्ष निकलता है कि केवल भाग्य के भरोसे बैठे रहने से कुछ प्राप्त नहीं होता। वास्तव में कर्म और भाग्य एक दूसरे के पर्यायवाची हैं। केवल भाग्य के भरोसे बैठने वाले आलसी और निकम्मे होते हैं। पुरुषार्थ किए बिना भाग्य भी किसी को कुछ नहीं दे सकता। इसीलिए यह सूक्ति सत्य ही प्रतीत होती है-'दैव-दैव आलसी पुकारा' अर्थात् 'भाग्य देगा', 'भाग्य देगा'-इस प्रकार का कथन केवल आलसी ही कहा करते . हैं। हमें कवि की इस उक्ति पर ध्यान देना चाहिए-"पुरुष हो, पुरुषार्थ करो, उठो वर-तुल्य वरो, उठो"।

(iii) भारत विविध संस्कृतियों, संप्रदायों एवं भाषाओं का देश है। यहाँ अनेक प्रकार के उत्सव और त्योहार मनाए जाते हैं। वसंतोत्सव, होली, वैसाखी, ईद, स्वतंत्रता दिवस, गणतंत्र दिवस, गांधी जयंती, बाल दिवस, दशहरा, दीपावली, ओणम, पोंगल, गुरुपर्व, रक्षाबंधन, बड़ा दिन (क्रिसमस) आदि अनेक

ऐसे त्योहार हैं जिनका संबंध संस्कृति, धर्म, देश या देश के महापुरुषों के साथ है। इन उत्सवों का आयोजन अलग-अलग ढंग से किया जाता है।

आज के भौतिकवादी युग में राष्ट्रीय महत्त्व के त्योहारों को छोड़ दिया जाए तो लगभग सभी त्योहारों का रूप-स्वरूप बदल रहा है। नगरीकरण, व्यवसायीकरण, मशीनीकरण आदि संस्कृतियों ने अपना रंग जमाना शुरू कर दिया है। हमारे परंपरागत त्योहार भी इस प्रकार की पाश्चात्य संस्कृति की चपेट में आते जा रहे हैं।

सबसे पहले रक्षाबंधन की बात की जाए। अभी कुछ वर्ष पूर्व यह एक सादा एवं पवित्र त्योहार था। भाई-बहन का रिश्ता दुनिया में सब रिश्तों से ऊपर है। इस रिश्ते को रक्षाबंधन के दिन सूत (धागा) बाँधकर और सुदृढ़ करने की परंपरा निभाई जाती थी। परंतु आज के व्यवसायिक युग में इसका स्वरूप ही बदल गया है। उत्पादकों, वितरकों, विज्ञापनों तथा केवल टी. वी. के चैनलों के कारण इस पवित्र त्योहार में चकाचौंध, प्रदर्शन और कृत्रिमता का समावेश हो रहा है। जहाँ घर में पड़े एक धागे और गुड़ से काम चल जाता था वहाँ अब एक-दूसरे में बढ़कर खर्च करने की भावना पनप रही है। एक रुपए से लेकर एक लाख तक की राखियाँ बाज़ार में तरह-तरह के वर्ग के लोगों को लुभा रही हैं। सौ रुपए से लेकर दो हज़ार तक के मूल्य के मिठाई के डिब्बे उपलब्ध हैं। बहनें भी कम नहीं। वे भी भाइयों को आधुनिक ढंग से लूटने लगी हैं।

क्रिसमस, दीपावली, दशहरा, गुरुपर्व आदि उत्सवों को मनाने के ढंग भी बदल चुके हैं। नगरतोरण बनाए जाते हैं, फ्लैक्स बनाकर टाँगे जाते हैं और झंडे, सजावटी प्रकाश, नगर कीर्तन, शोभा यात्रा, दान-दक्षिणा या लंगर वितरण आदि की बात ही क्या। धनी लोग अपने घरों पर सजावटी प्रकाश करने में हज़ारों-लाखों खर्च कर देते हैं। पटाखों तथा दूसरे प्रकार की आतिशबाजी खर्चीली, भड़कीली और यांत्रिक होती जा रही है। ऐसे त्योहारों पर अरबों खर्च होने लगे हैं।

आज दिखावा अधिक होने लगा है। पास धन हो या न हो, प्रदर्शन करना आवश्यक है। लोग उधार लेकर उपहारों का आदान-प्रदान करने लगे हैं। प्रतिस्पर्धा बढ़ने लगी है।

नववर्ष, होली, वसंतोत्सव आदि की तो बात ही दूसरी है। पहले हमारे पूर्वज घरों में बने व्यंजनों तथा उपकरणों तक सीमित रहते थे और आनंदपूर्वक इन उत्सवों का आनंद लेते थे। आज वह गई बीती बात हो चुकी है। नववर्ष के संदर्भ में अनेक विज्ञापन पहले ही आने शुरू हो जाते हैं। क्लबों, होटलों, सभाओं, समितियों, आमोद-केद्रों की ओर से अपने-अपने ढंग से नववर्ष की पूर्व-संध्या के कार्यक्रमों की घोषणा होने लगती है। युवावर्ग विशेष रूप से इस संस्कृति की ओर आकृष्ट

होता है। पहले लोग अपने घरों में ही ऐसे अवसरों का आनंद लेते और एक-दूसरे को शुभकामनाएँ देते थे। आज ऐसे व्यावसायिक केंद्रों में हज़ार रुपये से लेकर लाख रुपये तक के टिकट से प्रवेश पाने का प्रावधान होता है और सनक से भरे वहाँ जाने से नहीं चूकते। नृत्य, मदिरा, नग्नता आदि का सहारा लेकर ऐसे व्यवसायी लोगों को खूब लूटने लगे हैं।

उपहारों, संदेशों, खाद्यानों और व्यंजनों पर खूब पैसा बहाया जाता है। लोग पदोन्नति के लोभ में अपने अधिकारियों को प्रसन्न करने के लिए अपनी सामर्थ्य से भी बढ़कर उपहार देते हैं। घरों में बच्चों और स्त्रियों की मानसिकता भी बदल रही है। वे भी ऐसे उत्सवों पर नए वस्त्रों, उपकरणों और वाहनों की माँग करने लगी हैं। जन्मदिनों पर मध्यवर्ग का भरसक शोषण होता है।

उत्सवों में बढ़ती जा रही इस अंधाधुंध व्यावसायिकता को हम सब ही रोक सकते हैं। यवावर्ग को इसके लिए आगे आना चाहिए। वे ऐसे उपभोक्तावादी दृष्टिकोण पर नियंत्रण पाएँगे, तो ही उनका भविष्य उज्ज्वल हो पाएगा।

(iv) जीवन में सफलता पाने के लिए कठिन संघर्ष की आवश्यकता होती है। मानव जीवन विविधताओं एवं जटिलताओं का मिश्रण है। सभी का जीवन सीधे राह नहीं चलता। किसी भी लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए कड़े संघर्ष की आवश्यकता होती है।

मेरा जीवन भी अत्यंत जटिल रहा है। पिताजी के देहांत के बाद घर का चलना कठिन हो गया। मेरी दसवीं की पढ़ाई बीच में ही छूट गई। मुझें एक फैक्टरी में दैनिक मज़दूर का काम करना पड़ा। जिससे मेरा, मेरी माता तथा मेरी बहन का जैसे तैसे पेट पल रहा था। परंतु मेरा ध्यान अब भी इस बात पर केंद्रित था कि मैं अपनी शिक्षा को अधूरा नहीं छोड़ सकता। मैं असमर्थ अवश्य था परंतु असफल नहीं था।

हर असफलता के पीछे सफलता छिपी रहती है जो जीवन के लिए नया संदेश लेकर आती है। साहसी व्यक्ति असफल होने पर भी शांत होकर नहीं बैठता बल्कि उत्साह से आगे बढ़कर अपने लक्ष्य को प्राप्त करने का प्रयास करता हुआ निरंतर संघर्ष करता है। साहसी एवं बुद्धिमान व्यक्ति कभी असफलताओं से घबराता नहीं। वह जान जाता है कि हिम्मत हारने से कुछ बनता नहीं, बिगड़ता ही है। अतः वह अपने मनोबल को बनाए रखता है। जो व्यक्ति बार-बार असफलताओं का मुख देखकर अपना आत्मविश्वास एवं मनोबल खो बैठते हैं, ऐसे व्यक्ति जीवित होते हुए भी मृतक की भाँति है।

मैंने अपनी पढ़ाई का नया मोर्चा खोल लिया। घर में सब सो जाते, तो मैं अपनी पढ़ाई में लग जाता। दिन में काम की थकान मुझे बोझिल बनाती परंतु लक्ष्य की प्राप्ति संघर्ष के पथ पर अग्रसर होने को प्रेरित करती।

मनुष्य को यह बात भली-भाँति जान लेनी चाहिए उसके अधिकार में तो केवल कर्म करना ही है। फल पर उसका कोई अधिकार नहीं। संघर्ष ही जीवन है और जीवन एक संघर्ष है। इसलिए जय-पराजय, सफलता और असफलता के बारे में सोचना व्यर्थ है। आशा, उत्साह के सहारे ही मनुष्य बड़े-बड़े वीरता एवं साहस के कारनामे कर दिखाता है। विश्व इतिहास इसका साक्षी है कि ऐसे कई महान व्यक्ति हुए हैं जिन्होंने बार-बार असफलताओं का मुँह देखने पर ' भी अपनी हिम्मत न हारी। इनमें महाराणा प्रताप, शिवाजी, राबर्ट ब्रूस, अब्राहम लिंकन, महात्मा गाँधी जैसे अनेक महापुरुष हुए हैं जिनकी प्रबल इच्छा शक्ति के वेग ने उन्हें असाधारण लोगों की श्रेणी में लाकर खड़ा कर दिया। दुर्बल संकल्पवाला तथा कायर व्यक्ति समुद्र तट पर बैठा रहता है, वह डूबने के भय से समुद्र के आँचल में छिपे मोती प्राप्त नहीं कर पाता।

मेरा संघर्ष रंग लाया और मैंने अपनी दसवीं की परीक्षा प्रथम श्रेणी में पास कर ली। अब आगे की योजना के लिए कठिन संघर्ष की आवश्यकता थी। पुस्तकें तो एक परिचित से मिल गईं परंतु विज्ञान की परीक्षा के लिए सुविधाएँ नहीं मिल पाईं। अतः मैंने आर्टस की परीक्षा देने और बी. ए. के बाद आई. ए. एस. की तैयारी का दुर्गम लक्ष्य ठान लिया। मैं किसी से चर्चा करता तो लोग मेरा मज़ाक उड़ाते परंतु मैं अडिग रहा। मैंने अब तक की पुस्तकों में पढ़ा था कि जापान, इंग्लैंड हारकर भी नहीं हारे, टूट कर फिर बन गए और शीर्ष पर पहँच गए।

द्वितीय विश्वयुद्ध में जापान के दो बड़े औद्योगिक नगर हिरोशिमा एवं नागासाकी अणु बम का शिकार हो गए थे फिर भी जापान ने हिम्मत न हारी तथा चुनौतियों को स्वीकार किया। उन्होंने अपनी कर्मठता, सतत् मेहनत एवं लगन से अपने देश को संपन्न देशों की पंक्ति में लाकर खड़ा कर दिया। इसी प्रकार दूसरे विश्वयुद्ध में जब इंग्लैंड को भी पराजय का मुख देखना पड़ा था, यदि वह निराशा के गर्त में डूबा रहता तथा इसे भाग्य का खेल मानकर चुपचाप शांत होकर बैठ जाता है, तो वह आज भी पराधीनता एवं पराजय का दंश झेल रहा होता, परंतु इंग्लैंडवासियों ने ऐसा नहीं किया। उन्होंने अपनी पराजय से सबक लिया तथा दुगने उत्साह एवं आत्मविश्वास, मेहनत एवं लगन से अपने देश को स्वतंत्र एवं महान बनाया। हमारे देश का स्वतंत्रता संग्राम भी इस बात का प्रत्यक्ष साक्षी है कि संघर्षमय दृष्टिकोण ही सफलता का द्योतक होता है।

लोगों के चिंतन के विपरीत मैंने संघर्ष जारी रखा। मेरे सामने वह पानवाले का निर्धन बेटा आदर्श था, जो आई. ए. एस. में प्रथम रहा था। अंततः मैं प्रथम तो नहीं आ पाया परंतु आई. ए. एस. अवश्य बन गया।

अतः मानव को चाहिए कि कठिन से कठिन परिस्थिति में भी वह कभी धैर्य का साथ न छोड़े तथा निराशा, उदासी एवं नकारात्मक दृष्टिकोण को अपने पास न फटकने दे। संसार में कुछ भी असंभव नहीं है। बस आवश्यकता है तो व्यक्ति में उत्साह, हिम्मत एवं संघर्षमय दृष्टिकोण की। मानव को चाहिए कि वह हमेशा कर्मठता एवं मनोबल से कार्य करता रहे और जीवन का संघर्ष जारी रखे।

(v) सृष्टि के विकास का आधार नर और नारी दोनों हैं। दोनों एक दूसरे के पूरक हैं, इसीलिए प्राचीन काल से ही नारी को सम्मान की दृष्टि से देखा गया है। कविवर मैथिलीशरण गुप्त ने तो यहाँ तक कह दिया-

'एक नहीं दो-दो मात्राएँ, नर से बढ़कर नारी'।

महाकवि जयशंकर प्रसाद ने नारी के संबंध में कहा है

'नारी तुम केवल श्रद्धा हो, विश्वास रजत नग पग तल में,
पीयूष स्त्रोत-सी बहा करो, जीवन के सुंदर समतल में।

नारी प्रकृति का एक वरदान है, मानव जीवन में बहने वाली अमृत सलिला है। नारी सृष्टि की निर्मात्री, मातृत्व की गरिमा से मंडित, करुणा की देवी, ममता की स्नेहमयी मूर्ति, त्याग, समर्पण की प्रतिमा तथा स्नेह एवं सहानुभूति की अनुपम कृति है। एक ओर वह गृह की संचालिका है, इसीलिए गृहलक्ष्मी है, दूसरी ओर बालक की प्रथम शिक्षिका है, इसीलिए सरस्वती है, संतान को जन्म देती है, इसीलिए 'माँ' भी है। नारी के इन्हीं गुणों के कारण कहा गया है-'यत्र नार्यस्तु पूज्यंते रमंते तत्र देवता।'

एक समय था जब समाज में नारी को आदर एवं श्रद्धा से देखा जाता था। उसे पुरुष के समान अधिकार प्राप्त थे तथा कोई भी मांगलिक कार्य स्त्री के बिना पूर्ण नहीं होता था। स्त्री को माता का जो महान और भव्य रूप हिंदू शास्त्रकारों ने दिया, वही अन्य किसी देश में नहीं मिलता। भारतीय संस्कृति में नारी को 'देवी', 'भगवती' आदि कहा गया है। उसका स्थान नर से कहीं

बढ़कर माना जाता था। गार्गी, मैत्रेयी, अनसूया, सावित्री जैसी विदुषी महिलाएँ इसका ज्वलंत उदाहरण हैं।

धीरे-धीरे समय के पटाक्षेप के कारण नारी की दशा में बदलाव आने लगा। कहाँ तो वह श्रद्धामयी और पूजनीय मानी जाती थी, तो कहाँ वह पुरुष की दासी बनकर घर की चारदीवारी में बंद होकर रह गई। आर्थिक परतंत्रता के कारण उसकी दशा और भी दयनीय हो गई। उसे केवल भोग-विलास एवं प्रताड़ना की वस्तु समझा जाने लगा। मध्यकाल में परदा प्रथा, बाल-विवाह, बहुविवाह, अनमेल विवाह, सती प्रथा जैसी बुराइयों के कारण उसकी स्थिति और भी हीन हो गई।

समय सदैव एक-सा नहीं रहता। परिस्थितियाँ बदलीं और साथ-साथ नारी के प्रति दृष्टिकोण भी बदलने लगा। ब्रह्म समाज तथा आर्य समाज ने नारी जाति के उद्धार का बीड़ा उठाया। ब्रह्म समाज के प्रवर्तक राजाराम मोहन राय ने 'सती प्रथा' को कानूनन बंद कराने में सफलता प्राप्त की, तो आर्य समाज के जन्मदाता महर्षि दयानंद ने नारी जाति को शिक्षित करने की दिशा में ठोस कदम उठाए।

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद नारी को पुनः पुरुष के समकक्ष अधिकार मिले। भारतीय संविधान में उसे पुरुष के समकक्ष माना गया। आज वह जीवन के हर क्षेत्र में पुरुष के साथ कंधे-से-कंधा मिलाकर आगे बढ़ रही है तथा अपनी योग्यता एवं प्रतिभा का परिचय दे रही है। आज वह दोहरी भूमिका निभा रही है। एक ओर तो वह गृहिणी है तथा परिवार के उत्तरदायित्वों से बँधी है, तो दूसरी ओर स्वावलंबी है तथा अनेक क्षेत्रों में कार्यरत है।

यद्यपि आज की नारी आत्मनिर्भर तथा स्वतंत्र है, परंतु भारत जैसे विशाल देश में गाँवों में आज भी नारी की स्थिति अच्छी नहीं है। गाँवों में आज भी वह पुरुष की दासी है तथा कष्टपूर्ण जीवन बिता रही है क्योंकि वह पूर्णतः पुरुष पर आश्रित है।

बड़े नगरों में नारी की दोहरी भूमिका के कारण कुछ समस्याओं ने भी जन्म लिया है, जिनमें पारिवारिक कलह, दांपत्य जीवन में कटुता, नारी के प्रति बढ़ते अपराध, तलाक आदि शामिल हैं। पश्चिमी सभ्यता की चकाचौंध में अत्यधिक शिक्षित एवं स्वावलंबी नारी अपनी संस्कृति तथा नैतिक मूल्यों को विस्मृत करती जा रही है, जिसे उचित नहीं माना जा सकता।

स्त्री और पुरुष समाज रूपी गाड़ी के दो पहिए हैं; अतः समाज की उन्नति एवं विकास के लिए दोनों का सुदृढ़ होना आवश्यक है, इसलिए यह आवश्यक है कि पुरुष नारी को अपने से हीन न समझे तथा नारी भी अपने कर्तव्यों के प्रति सचेत रहे।

पर उपदेश कुशल बहुतेरे

(vi) (a) यह उक्ति एक अटल सत्य है कि दूसरों को उपदेश देने वालों की कोई कमी नहीं है। इस उक्ति को चरितार्थ करने वाली एक कहानी स्मरण हो आती है। यह पुराने जमाने की बात है। एक गाँव में एक धनी सेठ रहता था। उसके पूर्वजों के पास भरपूर संपत्ति थी। वह रुपए का लेन देन करने वाला साहूकार भी था। उसके विवाह के तेरह वर्ष बाद भी कोई संतान नहीं हुई। उस काल में आधुनिक डाक्टरी सहायता या विशेषज्ञ नहीं होते थे। केवल हकीम, वैद्य या संत-फकीर ही मान्यता प्राप्त स्रोत थे।

सेठ ने दूर-दूर तक सभी वैद्यों व हकीमों के तलवे चाट लिए परंतु उसकी संतान की इच्छा पूर्ण न हुई। अंततः वह उदास रहने लगा और परोपकार के कार्यों में रुचि लेने लगा। लाचार लोगों को बहुत कम सूद पर रुपये देने लगा।

श्रावणी शुक्ला के अवसर पर गाँव में मेला लगा तो वहाँ दूर-दूर से साधु-संन्यासी व योगी भी आए। मेले के बाद एक-दो दिन तक सभी साधु लोग तो चले गए परंतु एक साधु वहीं समाधि लगाए रहा। तीन दिन की समाधि भी न खुली तो लोगों ने उनके ऊपर छप्पर छा दिया और आगे बैठने लगे।

चार दिन बाद समाधि खुली तो लोगों का तांता लग चुका था। सभी साधु की जय-जयकार करने लगे। सेठ का साधुओं में विश्वास न था। फिर भी वह पत्नी के हठ के सामने झुक गया। सेठसेठानी ने प्रातःकाल जाकर साधु के चरणों में नमस्कार किया और अपना दुःख कह सुनाया। साधु ने कहा-"ईश्वर पर भरोसा रखो। उसके घर मे देर है परंतु अंधेर नहीं।"

सेठ-सेठानी घर लौट आए। सेठ और भी निराश हो गया। उसने सोचा था कि शायद साधु कोई दवा या नुस्खा देगा। कोरी सांत्वना लेकर आना उसे और भी निराश कर रहा था।

समय पाकर सेठानी को आशा जगी। अगले ही वर्ष के मेले से पहले ही उनके यहाँ चाँद-सा पुत्र उत्पन्न हुआ। सेठ-सेठानी की साधु के प्रति श्रद्धा का कोई पारावार न रहा। सेठ हर रोज़ साधु की

कुटिया में जाकर सेवा करने लगा। उसने धन खर्च करके पक्का स्थान बनवा दिया। पास ही एक कुआँ खुदवा दिया। फलदार वृक्ष लगवा दिए। श्रद्धालुओं के लिए एक बड़ी धर्मशाला बना दी।

सेठ का पुत्र चार वर्ष का हो गया तो उसके शरीर पर फोड़े निकलने लगे। माँ को पता था कि इसका कारण गुड़ है। उसका बेटा गुड़ बहुत खाने लगा था। लाडला पुत्र होने के कारण वह कुछ न कहती थी परंतु जब पानी सिर से ऊपर होने लगा तो वह डाँटने लगी। उसे डाँट का कोई असर न होता।

बेटा जानता था कि माँ उसे यूँ ही झूठमूठ की डाँट पिलाती है। फलस्वरूप बेटे का रोग बढ़ने लगा।

सेठानी ने बेटे को उसी साधु के पास ले जाकर इलाज पूछने की सोची। बेटा अनमने भाव से चल पड़ा। कुटिया में प्रणाम करके अन्य श्रद्धालुओं के मध्य जा बैठे। जब कथा समाप्त हो गई और प्रसाद बाँटा जाने लगा तो सेठानी ने बालक को साधु महाराज के चरणों में बिठाकर कहा- “महाराज! मेरे बच्चे पर कृपा कीजिए। यह आपके ही आशीर्वाद की देन है। आपकी कृपा से हमारी गोद हरी हुई है अब इसे छीनकर मुझे फिर से निराश न कीजिए।” साधु ने कारण पूछा तो सेठानी ने सारी समस्या उसके सामने खोलकर सुना दी। सारी कहानी सुनकर साधु उठा और भीतर चला गया। बोला कुछ नहीं। निराश सेठानी लौट आई। फिर भी सोचा कि महापुरुष बोलते नहीं हैं अपितु कृपा दिखाते हैं। शायद बेटा सुधर जाए।

परंतु बेटा न सुधरा। उसकी गुड़ खाने की आदत और बढ़ गई। सेठानी ने देखा कि अब उसके पुत्र का मुँह भी सड़ने लगा है। वह पुनः साधु के पास गई। इस बार फिर कथा सुनाई तो साधु ने इतना कहा

“तुम इसे लेकर अगले महीने की पूर्णिमा की सुबह आना।” सेठानी आज्ञा पाकर उठ खड़ी हुई। बेटे को लेकर चल दी। उसकी सारी आशा निराशा में बदल चुकी थी। वह वैद्यों व हकीमों से दवा खिला-खिलाकर थक चुकी थी। अब वह साधु महाराज ही अंतिम उपचार दिखा सकता था परंतु यहाँ भी निराशा ही मिलती है।

अगली पूर्णिमा की सुबह सेठानी फिर साधु के चरणों में गई। स्मरण के लिए पुनः अपने बेटे की बीमारी का वर्णन किया। इस बार साधु फिर उठ गया। बच्चे की ओर कृपाभाव से देखा। उसकी

आँखें कातर हो उठीं। वह फिर वही वाक्य बोला कि 'अगली पूर्णिमा की सुबह आना'। ऐसा कहकर वह भीतर चला गया।

सेठानी इस बार अंदर तक टूट चुकी थी। उसकी साधु के प्रति अपार श्रद्धा अब धीरे-धीरे क्षीण होने लगी। जैसे-तैसे महीना काटा। अगली पूर्णिमा की सुबह वह उदास मन से साधु की कुटिया की ओर बेटे सहित जा रही थी। उसकी गति धीमी थी मानो वह पीछे जा रही हो। उसे कोई आशा न थी। कोई उत्साह न था परंतु इस बार साधु ने बच्चे के सिर पर हाथ फेर कर कहा- "देखो बेटा! आज के बाद कभी गुड़ मत खाना।" इतनी बात सुनकर सेठानी ने पूछा"महाराज! इतनी बात तो आप पहले दिन ही कह सकते थे।" इस पर साधु ने कहा-"कैसे कह देता? उन दिनों में भी बहुत गुड़ खाता था"। सेठानी समझ गई कि उपदेश देना कितना कठिन है।

(b) मनुष्य दूसरों के अनुभव से बहुत कुछ सीखता है। कई बार ऐसा भी होता है कि हम किसी दूसरे के अनुभव पर टिप्पणी करते हुए कह उठते हैं- ...... काश! ऐसा पल मेरे जीवन में भी आया होता।

मुझे एक सत्यकथा स्मरण हो आती है जो इसी वाक्य पर आधारित है। वह कथा मुझे मेरे दादा जी ने सुनाई थी।

हमारे गाँव में मुख्यमार्ग बन रहा था। हिमाचल का क्षेत्र होने के कारण पथरीला व पहाड़ी मार्ग काटना पड़ रहा था। जगह-जगह ऊँची पहाडियाँ आ जातीं। खुदाई का काम चलते-चलते वेदी वंश से अधिग्रहण की गई एक पहाड़ी भूमि पर जा पहुंचा। अगली भूमि में पड़ते एक टीले तक पहुँच गया। वह टीला चारों ओर से पक्की पत्थरों से बनी पाँच-छह फुट चौड़ी व पच्चीस फुट ऊँची दीवारों से घिरा था।

जून महीने की तपती धूप थी। लगभग बारह बजे का समय था। तेरह मज़दूर सड़क की खुदाई का काम कर रहे थे। टीले की दीवार तोड़ी जा चुकी थी। एक मजदूर की कुदाली से कोई ऐसी वस्तु टकराई जिससे 'खन्न' की ध्वनि निकली। मज़दर ने सोचा कि कोई भारी पत्थर होगा। उसने पुनः प्रहार किया तो ध्वनि और ज़ोर से आई। उसने हाथ से मिट्टी हटाई तो वह दंग रह गया। वहाँ एक पीतल की गागर दबी दिखाई दी। उसने दूसरे मज़दूरों को बुलाकर बताया।

गागर की बात सुनकर सभी हैरान हो गए। वे जानते थे कि पुराने लोग अपना धन व आभूषण घड़ों-गागरों में भरकर जमीन में दबा दिया करते थे। गागर निकालने के लिए सभी एक-दूसरे से आगे होने लगे।

एक मजदूर ने गागर में हाथ डाला तो एक प्याली निकली। मटमैली प्याली ने सबका उत्साह भंग कर दिया। कुल बारह प्यालियाँ निकलीं। वे निरुत्साह होकर काम पर लग गए।

दोपहर में एक मज़दूर प्याली को थोड़ा साफ़ कर उसमें सब्जी डालकर खाने लगा। रोटी खाकर प्याली धोने लगा तो वह आश्चर्य में डूब गया। प्याली सोने जैसी चमक रही थी। शोर मच गया। एक पारखी ने उसे घिसकर देखा तो घोषणा की-"अरे मूर्खो! यह सचमुच सोने की प्यालियाँ हैं। तुम्हारे तो भाग खुल गये।"

बँटवारे की समस्या गंभीर थी। मज़दूर तेरह थे और प्यालियाँ केवल बारह थीं। विवाद होने लगा। तेरहवें मजदूर को कैसे संतुष्ट किया जाए? इस पर पारखी मजदूर ने सुझाव दिया-"एक प्याली की आज की कीमत लगभग पचास रुपये होगी। तेरहवें व्यक्ति को शेष बारह लोग पाँच-पाँच रुपये डालकर साठ रुपये दे दें तो मामला सुलझ जाएगा।" परंतु कोई न माना। गंभीर पल था।

विवाद गहराने लगा। कोई भी पैसे लेने को तैयार न था। पारखी मज़दूर ने पुनः कहा-"यदि आपस में झगड़ते रहोगे तो ये प्यालियाँ ज़मीन का असली वारिस ले जाएगा।" मज़दूर ठहरे मज़दूर। वे न माने। आखिर तय हो गया कि सभी अपने अंगोछे की एक कतरन इस गागर में डालेंगे। कोई एक मजदूर आँख बंद करके बारी-बारी बारह कतरनें बाहर निकालेगा। जिसकी कतरन रह जाएगी, उसे प्याली न दी जाए। पहले तो सभी मान गए परंतु जब कतरनें निकाली गईं तो तेरहवाँ मज़दूर असंतुष्ट हो गया। शाम होते न होते उसने ज़मीन के मालिक को भेद बता दिया और वह आकर गागर समेत सभी प्यालियाँ ले गया।

यह कहानी सुनते ही मेरे मस्तिष्क में यही विचार कौंधा-काश! ऐसा पल मेरे जीवन में आया होता तो मैं मज़दूरों में एक सर्वमान्य समझौता करवा देता। विवेक मानव के लिए समृद्धि का मार्ग खोलता है और विवेकहीनता पतन व निराशा का।

प्रश्न 2.

Read the passage given below carefully and answer in Hindi the questions that follow, using your own words:

निम्नलिखित अवतरण को पढ़कर, अंत में दिए गए प्रश्नों के उत्तर अपने शब्दों में लिखिए:

किसी नगर में एक नवयुवक रहता था जिसका नाम सुन्दर था। वह मेहनत करने से हमेशा बचता था। जब भी कोई काम उसके सामने आ जाता था जिसमें उसे मेहनत करनी हो, तो वह उस कार्य से दूर भागने लगता था। मेहनत को लेकर उसके मन में यह बात बैठ गयी थी कि वह कभी मेहनत नहीं कर सकता लेकिन उसके अंदर अच्छी बात यह थी कि वह अपने जीवन में सफल होना चाहता था। वह सोचता था क्या कोई ऐसा व्यक्ति है जो उसे सफलता का मंत्र दे सके।

इस प्रश्न को लेकर वह बहुत से लोगों और विद्वानों के पास गया। कोई कहता था कि माता-पिता की सेवा करना सफलता का मंत्र है, तो कोई कहता था कि लोगों की मदद करना सफलता का मंत्र है। लेकिन किसी का भी उत्तर उसे संतुष्ट नहीं कर पाता था। एक दिन जब वह अपने नगर की एक सड़क से गुजर रहा था, तो उसने एक साधु को देखा जिसे एक बहुत बड़ी भीड़ ने घेर रखा था। उस साधु को उसने पहले कभी अपने नगर में नहीं देखा था। साधु के बारे में पूछने पर पता चला कि वे साधु लोगों के प्रश्नों के बहुत सटीक उत्तर देते हैं, आज तक कोई भी व्यक्ति उनके उत्तर से असंतुष्ट नहीं हुआ है। सुन्दर की आँखों में चमक आ गई। उसने सोचा कि क्यों न साधु से अपने प्रश्न का उत्तर जाना जाए। अगर उन्होंने मुझे सफलता का मंत्र बता दिया तो मैं जरूर सफल हो जाऊँगा।

वह साधु के पास गया और उनसे पूछा, “साधु महाराज, मैं अपने जीवन में सफल होना चाहता हूँ, क्या आप मुझे सफलता का मंत्र बता सकते हैं?” साधु के चेहरे पर मधुर मुस्कान आ गयी और उन्होंने कहा, “तुम्हारे इस प्रश्न के बारे में मैं तुम्हें अभी नहीं बताऊँगा। इस नगर में मुझे 10 दिन तक रुकना है। तुम कल आकर मुझसे मिलो।” अगले दिन साधु ने उसे एक बहुत बड़ी और मोटी किताब देते हुए कहा, “अगर तुम्हें सफलता का मंत्र जानना है तो इसके लिए तुम्हें इस किताब को पढ़ना होगा। इस किताब के किसी एक पृष्ठ पर सफलता का मंत्र दिया हुआ है। जैसे ही तुम उसे पृष्ठ को पढ़ोगे, तो तुरंत तुम्हें वह मंत्र मिल जायेगा लेकिन शर्त यह है कि इस किताब को तुम शुरू से पढ़ोगे, यदि तुमने इसे कहीं बीच में से पढ़ा, तो वह मंत्र तुम्हें नहीं मिल पायेगा।”

सुन्दर किसी भी तरह सफलता का मंत्र जानना चाहता था। अतः उसने साधु की शर्त मान ली और तुरंत उस किताब को शुरू से पढ़ना प्रारम्भ कर दिया। वह जल्दी से जल्दी उस पृष्ठ पर पहुँचना चाहता था, जहाँ सफलता का मंत्र लिखा हुआ था। अतः उसने किताब को लगातार पढ़ना जारी रखा। कब रात हुई और कब दिन, उसे बिल्कुल भी ध्यान नहीं था। वह खाना और पीना तक भूल गया था। हर समय किताब पढ़ता रहता था। नींद बहुत सताती, तो कुछ देर सो जाता लेकिन उठते ही पढ़ने बैठ जाता। सात दिन बाद जब वह किताब के आखिरी पृष्ठ पर पहुँचा, तो उसे लगा कि यह तो किताब का आखिरी पृष्ठ है, यहाँ पर मुझे सफलता का मंत्र मिलना तय है लेकिन जब वह किताब की आखिरी लाइन पर पहुँचा तो उसमें लिखा था-"अगर तुम्हें सफलता का मंत्र जानना है, तो इस किताब के पिछले 'कवर' पृष्ठ की जिल्द हटा कर देखो।"

सुन्दर ने तुरंत पिछले 'कवर' पृष्ठ की जिल्द को हटाया, तो कुछ लाइनें वहाँ लिखी हुई थीं। उन्हें पढ़ते ही वह खुशी से उछलने लगा और चिल्लाने लगा, "मुझे सफलता का मंत्र मिल गया। मुझे सफलता का मंत्र मिल गया।" इतना कहकर वह फिर से उन लाइनों को पढ़ने लगा, जिनमें यह लिखा था- "जिस तरह तुमने इस किताब को पढ़ने के लिए अपने दिन और रात एक कर दिए, तुम्हें अपने खाने पीने का ध्यान नहीं रहा, हर समय सफलता का मंत्र खोजने के लिए लगातार किताब पढ़ते रहे, तुमने अपना हर पल इस किताब में सफलता का मंत्र ढूँढने में लगा दिया, किसी भी अन्य चीज़ के बारे में तुमने एक पल के लिए भी नहीं सोचा, लगातार उत्साह और लगन के साथ तुमने अपने प्रत्येक क्षण को मंत्र पाने में डुबो दिया। यदि इसी ललक और दृढ़ इच्छा के साथ तुम दुनिया के किसी भी कार्य में सफलता प्राप्त करना चाहोगे, तो कोई भी तुम्हें सफल होने से नहीं रोक सकता।"

विवेकानन्द जी ने भी इस सफलता का मंत्र कुछ इस तरह बताया है- "अपना जीवन एक लक्ष्य पर निर्धारित करो। अपने पूरे शरीर को उस एक लक्ष्य से भर दो और हर दूसरे विचार को अपनी जिंदगी से निकाल दो। यही सफलता की कुंजी है।"

प्रश्न-

(i) सुन्दर किस चीज से घबराता था और क्यों? उसकी एक अच्छी बात क्या थी?।

(ii) सुन्दर साधु के पास क्यों गया? समझाकर लिखिए।

(iii) साधु ने सुन्दर को सफलता का मंत्र पाने के लिए क्या करने को कहा? समझाकर लिखिए। [4]

(iv) सुन्दर को सफलता का मंत्र कैसे मिला? समझाकर लिखिए। [4]

(v) इस गद्यांश से आपको क्या शिक्षा मिलती है?

उत्तर-

(i) सुन्दर मेहनत करने से घबराता था। वह ऐसे प्रत्येक कार्य से बचना चाहता था। जिसमें परिश्रम की आवश्यकता हो। उसमें एक अच्छी बात थी कि वह अपने जीवन में सफलता प्राप्त करना चाहता था।

(ii) सुन्दर साधु के पास सफलता का मंत्र लेने गया। वह साधु की कीर्ति से प्रभावित था और उसे विश्वास था कि ऐसे श्रेष्ठ साधु के पास सफलता का मंत्र अवश्य होगा जिसे पाकर वह सफल व्यक्ति बन सकता है।

(iii) साधु ने सुन्दर को सफलता का मंत्र पाने के लिए एक मोटी पुस्तक देते हुए निर्देश दिया कि उस पुस्तक को पूरी की पूरी पढ़ना होगा। उसी के किसी पृष्ठ पर सफलता का मूल मंत्र लिखा है परंतु पुस्तक को आदि से लेकर अंत तक पढ़ना होगा।

(iv) सुन्दर जल्दी से जल्दी सफलता का मूल मंत्र पाना चाहता था। वह बेहद उत्सुक था। अतः उसने खाना-पीना, सोना आदि कम करके निरंतर पुस्तक पढ़ना जारी रखा। अंतिम पृष्ठ पर लिखा था कि सफलता का मंत्र कवर' पृष्ठ की जिल्द में छिपा है। वहीं पर लिखा था कि दृढ़ इच्छा के साथ दुनिया के किसी भी कार्य में सफलता प्राप्त की जा सकती है।

(v) इस गद्यांश से हमें शिक्षा मिलती है कि हमें जीवन का लक्ष्य निर्धारित करके दृढ़ इच्छा शक्ति के साथ कर्म करना चाहिए। यही सफलता का मूल मंत्र है।

प्रश्न 3.

(a) Correct the following sentences and rewrite:
निम्नलिखित वाक्यों को शुद्ध करके लिखिए

(i) ममता गाने की कसरत कर रही है।
(ii) पिछले कुछ वर्षों के बीच भारत की आबादी बढ़ी है।
(iii) अपने बुरे दुष्कर्मों के कारण वह आज कंगाल है।
(iv) चोर सोमनाथ के घर पाँव दबाकर आया।
(v) स्वार्थी मित्र काम निकलते ही आँखें नीची कर लेते हैं।

(b) Use the following idioms in sentences of your own to illustrate their meaning:
निम्नलिखित मुहावरों का अर्थ स्पष्ट करने के लिए इन्हें वाक्यों में प्रयुक्त कीजिए:- [5]

(i) पापड़ बेलना।
(ii) कंधे से कंधा मिलाना।
(iii) पीठ दिखाना।
(iv) दाल में काला होना।

(v) फूला न समाना।

उत्तर-
(a)
(i) ममता गाने का अभ्यास कर रही है।
(ii) पिछले कुछ वर्षों में भारत की आबादी बढ़ी है।
(iii) अपने दुष्कर्मों के कारण वह आज कंगाल है।
(iv) चोर सोमनाथ के घर दबे पाँव आया।
(v) स्वार्थी मित्र काम निकलते ही आँखें फेर लेते हैं।

(b)
(i) गुलशन कुमार को फिल्म निर्देशक बनने के लिए न जाने कितने पापड़ बेलने पड़े।
(ii) आज की स्त्री पुरुष के कंधे से कंधा मिलाकर चल रही है।
(iii) सच्चे शूरवीर कभी भी रणक्षेत्र में पीठ नहीं दिखाते।
(iv) लेखाकार ने फाइलें देखते ही घोषित कर दिया कि दाल में कुछ काला है।
(v) अपने पुत्र को इंजीनियर बनते देखकर निर्धन मज़दूर फूला न समा रहा था।

Section-B – Prescribed Textbooks (50 Marks)
Answer four questions from this section on at least three of the prescribed textbooks.
Te vieneta (Gadya Sanklan)

प्रश्न 4.
"ये वे हाथ नहीं हो सकते, मैं मन में सोच रही थी, जो बच्चों को मीठी लोरी की थपकनें देकर सुलाते हैं, पति की कमीज़ में बटन टाँकते हैं या चिमटा-सनसी पकड़ते हैं।"
(i) प्रस्तुत पंक्तियाँ किस पाठ से ली गई हैं? इस पाठ की लेखिका कौन हैं? उन्हें कहाँ से गाड़ी पकड़नी थी? [1 1/2]
(ii) सफर में उस डिब्बे में कौन-कौन-सी महिलाएँ थीं? उनका परिचय अत्यंत संक्षेप में दीजिए। [3]
(iii) लेखिका ने उपर्युक्त कथन किस संदर्भ में कहा है? [3]
(iv) उपर्युक्त कथन जिस महिला के बारे में कहा गया है, वे कहाँ जा रही थीं और क्यों? उनका कौन-सा सामान उन्हें परेशान किए जा रहा था? [5]

उत्तर-
(i) प्रस्तुत पंक्तियाँ 'सती' शीर्षक कहानी में से ली गई हैं। इस कहानी की लेखिका शिवानी है।

उन्हें प्रयाग स्टेशन से गाड़ी पकड़नी थी।

(ii) सफर में उस डिब्बे में लेखिका शिवानी के अतिरिक्त एक पंजाबी और एक मराठी स्त्री थी। गाड़ी चलने के समय उस डिब्बे में एक चौथी महिला ने प्रवेश किया जिसने स्वयं को मदालसा सिंघाड़िया के रूप में परिचित कराया। पंजाबी स्त्री विस्थापित महिलाओं के लिए बनाए गए एक महिला आश्रम की संचालिका थी और मराठी स्त्री किसी मेजर जनरल वनोलकर की पत्नी थीं।

(iii) लेखिका ने उपर्युक्त कथन पंजाबी स्त्री के संदर्भ में कहा है। उसे लगा कि उस पंजाबी स्त्री का घरेलू काम-काज या रख-रखाव से कोई लेना-देना नहीं था। उसके चेहरे पर एक अजीब खालीपन था। उसके हाथों की बनावट मर्दानी और पकड़ मज़बूत थी।

(iv) प्रस्तुत कथन पंजाबी महिला के विषय में कहा गया है। वह किसी मीटिंग में भाग लेने जा रही थी। उसके पास एक मोटी-सी फाइल थी जिसे वह बीच-बीच में खोलकर कुछ आँकड़ों को पहाड़ों की तरह रटने लगती थी। उसकी सलवार, कमीज़, दुपट्टा यहाँ तक कि रूमाल भी खादी का था और शायद उसी के संघर्ष से उसकी लाल नाक का सिरा और भी अबीकी लग रहा था। उसके चेहरे पर रोब था परंतु लावण्य नहीं। उसमें जीवन के उल्लास की एक-आध भी रेखा नहीं थी।

प्रश्न 5.

रज्जब कौन था? उसका पेशा क्या था? वह अपने पेशे से मिले धन को लेकर कहाँ जा रहा था? क्या वह अपने गन्तव्य स्थल पर पहुँच सका? यदि हाँ, तो कैसे? 'शरणागत' कहानी के आधार पर स्पष्ट कीजिए। [12 1/2]

उत्तर-

'शरणागत' शीर्षक कहानी वृंदावन लाल वर्मा द्वारा लिखित एक सामाजिक कहानी है। इसका कथानक हमारे समाज के खोखले मानदंडों की समीक्षा करते हुए उच्च जीवन मूल्यों की स्थापना का प्रस्ताव करता है। इसमें दिखाया गया है कि कर्म या वंश आदि के नाम पर किसी भी सामाजिक को छुआछूत या ऊँचनीच का शिकार बनाना मानवता के विरुद्ध अपराध है। सबसे बड़ा धर्म मानव-धर्म है जो हमें दया, ममता, त्याग सिखाता है। प्रस्तुत कहानी का कथानक रज्जब नामक एक कसाई पर आधारित है।

रज्जब एक कसाई था वह दो-तीन सौ रुपए की रकम लेकर अपनी बीमार पत्नी के साथ ललितपुर से लौट रहा था। रास्ता बीहड़ और सुनसान था इसलिए उसने मड़पुरा नामक गाँव में रात बिताने का निश्चय किया। वह जानता था कि गाँव में कोई एक कसाई को आश्रय नहीं देगा फिर भी उसने कई लोगों से रातभर के लिए स्थान देने की याचना की, पर सबने इंकार कर दिया।

इसी गाँव में एक गरीब ठाकुर रहता था गाँववाले उसे 'राजा' कहकर पुकारते थे। रज्जब उसी के द्वार पर पहुँचा और बोला कि मैं दूर से आ रहा हूँ बहुत थका हुआ हूँ मेरी पत्नी को बुखार है, जाड़े में बाहर रहने से न जाने क्या हालत हो जाएगी इसलिए रातभर रहने के लिए दो हाथ जगह देने की कृपा करें। ठाकुर ने जब उससे उसकी जाति पूछी, तो रज्जब का उत्तर सुनकर वह आग बबूला हो गया। रज्जब ने बहुत अनुनय-विनय की, तो ठाकुर साहब ने उसे रातभर के लिए रुकने के लिए जगह दे दी। पति-पत्नी के सो जाने के बाद कुछ लोगों ने ठाकुर को इशारे से बुलाया और बताया कि एक कसाई रुपए की मोट बाँधे इसी ओर आया है, उसे कल देखेंगे। ठाकुर ने कहा कि मैं कसाई का पैसा नहीं छुऊँगा।

सवेरा होने पर भी रज्जब न जा सका, क्योंकि उसकी पत्नी के शरीर में बहुत दर्द था तथा वह एक कदम भी नहीं चल सकती थी। ठाकुर ने कुपित होकर रज्ज़ब को जाने के लिए कह दिया। रज्जब ने बहुत विनती की, मगर ठाकुर न माना। विवश होकर रज्जब गाँव के बाहर एक पेड़ के नीचे जा बैठा। उसने एक छोटी जाति के लोग को किराए की गाड़ी पर ललितपुर ले जाने के लिए राजी कर लिया। गाड़ी से यात्रा करते हुए जैसे ही अंधेरा होने लगा। कुछ लोग उन्हें लूटने के लिए बड़े-बड़े लट्ठ लेकर आ जाते हैं। परंतु उन्हें वही राजा ठाकुर बचाता है जिसके यहाँ उन्होंने रात्रि में शरण ली थी। वह स्पष्टतः कहता है-"बुंदेला शरणागत के साथ घात नहीं करता, उस बात को गाँठ बाँध लेना।"

इस प्रकार राजा ठाकुर एक शरणागत दंपति की रक्षा करके भारतीय संस्कृति की श्रेष्ठ साधनाओं को संजीवनी देने का दायित्व निभाता है। उसका यह साहस उसके मानवतावादी दृष्टिकोण का सूचक है। कहानीकार ने समाज के दृष्टिकोणों का संदर्भ देते हुए उच्च जाति की महत्ता को स्वीकार किया है, जिसे • हम मानव-जाति कह सकते हैं। इसके ऊपर कोई जाति नहीं है।

प्रश्न 6.

'क्या निराश हुआ जाए?' निबन्ध में निबन्धकार का क्या उद्देश्य है? किन दो घटनाओं के द्वारा निबन्धकार ने यह बताने का प्रयास किया है कि मनुष्यता अब भी पूरी तरह समाप्त नहीं हुई है? उन घटनाओं का संक्षेप में वर्णन कीजिए। [12 1/2]

उत्तर-

'क्या निराश हुआ जाए' शीर्षक निबंध हिंदी के सुप्रसिद्ध चिंतक, इतिहासकार व निबंधकार हजारी प्रसाद द्विवेदी द्वारा लिखित है। वे भारतीयता, भारतीय संस्कृति तथा श्रेष्ठ जीवन मूल्यों की

प्रतिष्ठा पर आधारित निबंधों में अपने मन-मस्तिष्क की बात पाठकों के सामने रखते हैं। इसीलिए उनके निबंधों में आत्मीयता का गुण सर्वत्र विद्यमान रहता है।

प्रस्तुत निबंध में आचार्य द्विवेदी ने आज के भारत और भारतवासियों की चिंतन-मनन शैली व आचारविचार का मूल्यांकन किया है। उन्होंने स्पष्ट किया है कि भौतिकवाद के प्रहार से आज हमारे सामाजिकों में कई प्रकार के संक्रमण आ चुके हैं, जो देश और मानवता के विरुद्ध पड़ते है। आज जीवन के उदात्त मूल्यों के प्रति आस्था डगमगाती दिखाई देती है परंतु इससे निराश होने की बात नहीं है। उन्होंने तर्क दिया है कि सभी लोगों में, सब समय में निराशाजनक स्थितियाँ नहीं देखी जातीं।

आज की मानवता, सेवा-भावना, ईमानदारी, सच्चाई और आध्यात्मिक मूल्यों के प्रति आस्था बनी हुई है। अनुपात में अंतरं अवश्य आने लगा है परंतु वे नष्ट नहीं हुए हैं। समय के फेर में आकर वे मूल्य थोड़े दब अवश्य गए हैं परंतु इससे निराश होने का कोई औचित्य नहीं।

लेखक ने अपनी विचारधारा को पुष्ट करने के लिए अपने साथ जुड़ी बीती दो घटनाओं का वर्णन किया है। एक बार वे रेलवे स्टेशन पर टिकट लेते समय दस रुपए के नोट की बजाए सौ रुपए का नोट थमा देते हैं। थोड़ी देर बाद टिकट-खिड़की पर बैठा वह क्लर्क बाबू प्रत्येक व्यक्ति का चेहरा परखते-पहचानते हुए उनके पास आता है। वह अत्यंत विनम्रता से भूल के कारण अधिक दे दी गई धनराशि लौटा देता है।

दूसरी घटना एक बस-यात्रा की है। एक बार लेखक बस दवारा यात्रा कर रहा था। उसके साथ उसकी पत्नी तथा बच्चे भी थे। कोई पाँच मील की यात्रा तय करने के बाद बस एक सुनसान जगह पर रुक गई। सभी यात्री घबरा उठे। कंडक्टर एक साइकिल लेकर चलता बना। लोगों को संदेह हुआ क्योंकि दो दिन पहले भी इसी स्थान पर एक बस लूटी गई थी। बच्चे पानी-पानी चिल्ला रहे थे। कुछ नवयुवकों ने ड्राइवर को पकड़कर पीटने की योजना बनाई ड्राइवर घबरा गया। लोगों ने उसे पकड़ लिया। उसने लेखक से आग्रह किया कि वह उसे बचाए। लेखक स्वयं भी भयभीत था, परंतु उसने किसी प्रकार ड्राइवर को मारपीट से बचा लिया।

लोगों ने ड्राइवर को मारा तो नहीं, पर बस से उतार कर एक जगह घेर कर रखा। उसी समय देखा कि एक खाली बस आ रही थी और उस पर हमारी बस का कंडक्टर सवार था। वह लेखक के बच्चों के लिए दूध

और पानी भी लेकर आया था। यात्रियों ने ड्राइवर से क्षमा माँगी और आई हुई बस पर बैठकर बस अड्डे पर पहुँच गए।

लेखक ने विचार दिया है कि उनके जीवन में ऐसी असंख्य घटनाएँ घटी हैं जिनसे सिद्ध होता है कि लोगों में ईमान, सत्यनिष्ठा, परोपकार, दया, सहयोग आदि मूल्यों के प्रति अभी भी वैसी ही आस्था है जैसी हमारे इतिहास व परंपरा में पाई जाती थी। अतः निराश होने की आवश्यकता कदापि नहीं है।

काव्य मंजरी (Kavya Manjari)

प्रश्न 7.

भीतर जो डर रहा छिपाए, हाय! वही बाहर आया। एक दिवस सुखिया के तन को ताप-तप्त मैंने पाया। ज्वर में विह्वल हो बोली वह, क्या जानूँ किस डर-से-डर, मुझको देवी के प्रसाद का, एक फूल ही दो लाकर।

(i) 'मैंने' शब्द किसके लिए प्रयुक्त हुआ है? उसे किस बात का डर था?

(ii) सुखिया का स्वभाव कैसा था? उसके इस स्वभाव का क्या परिणाम निकला? उसने किससे, क्या इच्छा जाहिर की? [3]

(iii) क्या सुखिया की इच्छा पूरी हो सकी? कारण सहित लिखिए। [3]

(iv) इस कविता में कवि ने किस बुराई को किस प्रकार उजागर किया है?

उत्तर-

(i) 'मैंने' सर्वनाम का प्रयोग सुखिया के पिता के लिए हुआ है। वह सुखिया को बाहर जाकर खेलने से रोकता है क्योंकि बाहर महामारी फैली हुई थी। परंतु सुखिया कहाँ मानने वाली थी? अंततः वह भी महामारी से ग्रस्त हो गई। उसे ज्वर रहने लगा। अतः पिता का डर सच सिद्ध हुआ।

(ii) सुखिया बीमार होते हुए भी घर में एक पल के लिए न ठहरती थी। उसका पिता उसे बाहर खेलने से रोकता था परंतु वह पिता का कहना नहीं मानती थी। उसके इस स्वभाव का फल यह हुआ कि वह महामारी की चपेट में आ गई। उसका शरीर बुखार से तपने लगा। उसने पिता से इच्छा व्यक्त की उसे देवी माँ के प्रसाद का एक फूल लाकर दिया जाए।

(iii) सुखिया की देवी माँ के प्रसाद का एक फूल पाने की इच्छा पूर्ण न हो सकी। वह उन दिनों की सामाजिक व्यवस्था में पाए जाने वाले जातिवाद की विध्वंसक व अमानवीय नीतियों का शिकार हो गई। सवर्णों ने उसके पिता को मंदिर परिसर में अमानवीय मार-पीट करके भगा दिया।

(iv) प्रस्तुत कविता में कवि ने धार्मिक अवधारणा की संकीर्णता पर व्यंग्य करते हुए जातिवाद को अमानवीय बताया है। छुआछूत एक भयंकर सामाजिक बुराई है। ईश्वर ने सभी मनुष्यों को एकसा बनाया है। एक परमपिता की संतानों में परस्पर भेदभाव तर्क से परे है। ईश्वर के समक्ष सभी समान हैं।

प्रश्न 8.

"बाल लीला" के आधार पर बताइए कि सूरदास जी ने श्रीकृष्ण के बाल स्वरूप का कैसा वर्णन किया है? श्रीकृष्ण अपने बड़े भाई बलराम की शिकायत किससे करते हैं और क्या शिकायत करते हैं? [12]

उत्तर-

सूरदास भक्तिकालीन कृष्ण-काव्य धारा के महत्त्वपूर्ण कवि हैं। उन्होंने अपने काव्य में कृष्ण बाल-लीलाओं का अद्भुत वर्णन किया है। इस वर्णन में स्वाभाविकता और वात्सल्य रस का सुंदर योग मिलता है। सूरदास जी बालरूप कृष्ण की जिस झलक का वर्णन कर रहे हैं, उसमें उनके हाथ में मक्खन है। उनके मक्खन में सने हाथ अत्यंत सुंदर लग रहे हैं। वे घुटनों के बल चल रहे हैं जिसके कारण उनका शरीर धूल से सना है। कृष्ण को मक्खन और दही बहुत भाता है। अतः उनके मुँह पर दही लगी हुई है।

कृष्ण के स्वरूप की सुंदरता का वर्णन करते हुए कवि ने उनके सुंदर गालों तथा चंचल आँखों की चर्चा की है। उनके माथे पर गोरोचन का तिलक लगा है। बालों की लटाएँ लटक रही हैं, जो मुख पर फैल रही हैं। ऐसा लगता है मानो मस्त भौंरे गालों रूपी फूलों का मादक रस पी रहे हों। उनके गले में कठुला और शेर का नाखून अत्यंत शोभा दे रहा है। सूरदास जी कहते हैं कि श्री कृष्ण के बाल रूप का एक पल के लिए दर्शन करके सुख प्राप्त करना सैंकड़ों युगों के सुख से भी अधिक श्रेष्ठ तथा मनोहर है।

जब कृष्ण थोड़े बड़े हो जाते हैं तो वे बोलना सीख जाते हैं। यशोदा को वे मैया, नंद को बाबा और बलराम को भैया कहने लगे हैं। वे चलने लगे हैं जिसके कारण माता उन्हें खेलते-खेलते दूर तक जाने से रोकती है। उसे भय है कि कोई गाय उनके बच्चे को कोई हानि न पहुँचा दे। ब्रज की गोपियाँ और गोपालों के बच्चे आश्चर्य तथा उत्सुकता से वात्सल्य रस का यह दृश्य देखते हैं। प्रत्येक घर में इस बात की बधाइयाँ दी जा रही हैं। सूरदास भी कृष्ण के इस बालरूप पर न्योछावर हो रहे हैं।

समवयस्क बच्चे प्रायः खेलते-खेलते लड़ पड़ते हैं और एक-दूसरे को चिढ़ाने लगते हैं। इसी का मार्मिक और ह्रदयस्पर्शी वर्णन करते हुए कवि ने कृष्ण द्वारा बलराम भैया की शिकायत करने का दृश्य उपस्थित किया है।

बलराम कहता है कि कृष्ण यशोदा का पुत्र नहीं अपितु उसे वे लोग कहीं से खरीद कर लाए हैं। वह बार-बार उनके वास्तविक माता-पिता के नाम पूछता है।

बलराम तर्क देकर पूछता है कि नंद और यशोदा तो दोनों गोरे रंग के हैं, फिर उनके यहाँ तुझ जैसा साँवला कैसे हो सकता है? बलराम के इस तर्क पर सभी ग्वालों के बच्चे चुटकी बजा-बजाकर उपहास उड़ाते हैं और बलराम उन्हें बढ़ावा देता है। कृष्ण अब अपनी माँ पर भी संदेह व्यक्त करते हैं क्योंकि वह बलराम को कभी कुछ नहीं कहती उल्टे उसे डाँटती रहती है। ये बातें सुनकर यशोदा मैया मन ही मन प्रसन्न हो रही है। वह उन्हें समझाने के लिए कहती हैं कि बलराम तो जन्म से अत्यंत धूर्त है। अर्थात् उसकी इन बातों को गंभीरता से नहीं लेना चाहिए। वह उन्हें विश्वास दिलाने के लिए गोधन की शपथ लेकर कहती है कि वहीं उसकी माता है और वह उन्हीं का अपना पुत्र है।

इस प्रकार सूरदास ने श्रीकृष्ण के बालरूप और वात्सल्य रस का सुंदर, मनोहर और स्वाभाविक चित्रण किया है। उनका यह चित्रण बालमनोविज्ञान के अनुसार चित्रित हुआ है जो आज तक अद्वितीय माना जाता है।

प्रश्न 9.
'प्रकृति भाग्य-बल से नहीं, भुजबल से झुकती है।' -'उद्यमी नर' कविता के आधार पर सिद्ध कीजिए। [12 1/2]

उत्तर-
कवि रामधारी सिंह दिनकर ने 'उद्यमी नर' शीर्षक कविता में इस तथ्य को उजागर व स्थापित किया है कि 'प्रकृति भाग्य-बल से नहीं, भुजबल से झुकती है। प्रस्तुत कविता की मूल चेतना व स्वर प्रगातिवादी है। इसमें कवि ने भाग्यवाद के सिद्धांत की आलोचना करते हुए पुरुषार्थ या परिश्रम के महत्त्व को स्थापित किया है।

प्रगतिवादी विचारधारा का प्रथम सोपान नियतिवादी दृष्टिकोण का विरोध है। नियतिवादी अर्थात् भाग्य को दोष देने वाला व्यक्ति सदैव पिछड़ता रहेगा। जिस व्यक्ति को अपने श्रम और भुजाओं

की शक्ति पर भरोसा नहीं, वह उन्नति के मार्ग पर कभी आगे नहीं बढ़ सकेगा। कवि ने विचार दिया है कि ईश्वर ने सभी प्रकार के तत्त्वों को आवरण में या धरती के गर्भ में छिपा कर रखा हुआ है। उन्हें केवल उद्यमी नर निकाल पाता है-

छिपा दिए सब तत्व आवरण के नीचे ईश्वर ने,
संघर्षों से खोज निकाला उन्हें उद्यमी नर ने।

कवि दिनकर ने उस सिद्धांत की खुलकर निंदा की है जिसमें लोग ब्रह्मा या विधाता से लिखाकर आने की धारणा का समर्थन करते हैं। उनको विचार है कि मनुष्य ब्रह्मा से कुछ भी लिखाकर नहीं लाता। उसने अपना सभी प्रकार का सुख केवल अपनी भुजाओं के बल पर पाया है। कवि के शब्दों में-

"ब्रह्मा से कुछ लिखा
भाग्य में मनुज नहीं लाया है,
अपना सुख उसने अपने
भुजबल से ही पाया है।"

कवि ने पूँजीवादी व्यवस्था के सबसे बड़े अस्त्र के रूप में इसी भाग्यवाद को माना है। ये ऊँचे लोग भाग्यवाद की ओट लेकर पाप कमाते हैं। यह शोषण का अचूक अस्त्र है। इसी के द्वारा एक मनुष्य दूसरे मनुष्य का भाग या अधिकार दबा लेता है। कवि इन भाग्यवाद के समर्थकों से प्रश्न करता है कि यदि विधि का लिखा हुआ इतना ही शक्तिशाली और अमिट है तो यह बताओं कि पृथ्वी अपने सारे रत्न स्वयं ही तुम्हारे सामने निकालकर क्यों नहीं डाल देती।

कवि ने मनुष्य के परिश्रम की प्रतिष्ठा को सबसे ऊपर स्थान दिया है। वह प्रकृति के वैभव को जल से सींचसींच कर पैदा करता है। यदि भाग्य इतना प्रबल होता तो भाग्य का धनी व्यक्ति अपने संचित कोष को भाग्य के सहारे ही क्यों, नहीं उठा लाता? कवि के शब्दों में-

"उपजाता क्यों विभव प्रकृति को
सींच-सींच वह जल से?
क्यों न उठा लेता निज संचित
कोष भाग्य के बल से?"

कवि कहता है कि मनुष्य का यदि कुछ भाग्य है, तो वह है-भुजाओं की शक्ति। भुजाओं की इसी शक्ति के सम्मुख पृथ्वी और आकाश झुकते हैं। कवि कहता है कि जिसने भी परिश्रम किया है उसे पीछे मत रहने दो. उसे उसके परिश्रम का सुख भोगने दो। भाव यह है कि परिश्रमशील व्यक्ति को उसके परिश्रम का पूरा लाभ मिलना चाहिए।

इस प्रकार कवि ने इस उद्बोधन गीत में मनुष्य को पुरुषार्थ के महत्त्व को पहचानने के लिए कहा है। वास्तव में यह एक उद्बोधन गीत के साथ-साथ प्रेरणा-गीत भी है। इसमें कवि ने प्रगतिवादी विचार देते हुए शोषण के विरुद्ध आक्रोश व्यक्त किया है। दूसरी ओर कवि मनुष्य को शोषित होने से बचने का भी संकेत देता है। यह तभी संभव है, जब वह अपने पुरुषार्थ और भुजाओं की शक्ति को पहचान कर इनका अनुकूल उपयोग करेगा।

सारा आकाश (Saara Akash)

प्रश्न 10.

"मुझे पता होता तो मैं कभी भी नहीं करती। मैंने समझा कि कोई सादा मिट्टी का ढेला है।"

(i) प्रस्तुत पंक्तियों के वक्ता और श्रोता कौन-कौन हैं? उनके बीच किस विषय पर चर्चा हो रही है? [1]

(ii) वक्ता की बात सुनकर श्रोता ने गुस्से में क्या-क्या कहा? [3]

(iii) उक्त घटना के सन्दर्भ में समर की क्या प्रतिक्रिया थी? [3]

(iv) समर की आत्मग्लानि का अपने शब्दों में वर्णन कीजिए।

उत्तर-

(i) प्रस्तुत पंक्तियों की वक्ता राजेंद्र यादव द्वारा रचित उपन्यास 'सारा आकाश' की नायिका प्रभा है। श्रोता उसका पति समर है।

(ii) जब वक्ता प्रभा ने बताया कि उसने पूजा में रखे गणेश को साधारण मिट्टी का ढेला समझकर उससे बर्तन माँज दिए, तो समर की भाभी ने बहुत ही हल्ला मचाया। वह सोचती है कि अब पूजा के अपमान पर कुछ अनिष्ट अवश्य होगा। इस पर समर ने प्रभा के चाँटा जड़ दिया।

(iii) चाँटा जड़ने के बाद समर को पश्चात्ताप होने लगता है। उसको दुःख था कि वह सात-आठ महीने से प्रभा के साथ बोल नहीं रहा था। इस लम्बे 'अबोले' के बाद वह पहली बार बोला,तो गाली और तमाचे के साथ।

(iv) समर का अपनी पत्नी से 'अबोली' चल रहा था। गणेश की मूर्ति से बर्तन माँजने के प्रसंग ने उसे इतना उत्तेजित व क्रुद्ध कर दिया कि प्रभा को तमाचा जड़ दिया और गाली भी दी। यहीं से समर की आत्मग्लानि का प्रकरण प्रारम्भ होता है। वह देर तक उस गाली व चाँटे के व्यवहार पर पश्चात्ताप करता रहा। उसे लगा कि औरत पर हाथ उठाना कतई ठीक नहीं था। यहीं से उसका हृदय-परिवर्तन शुरू होता है।

प्रश्न 11.
प्रभा के परदा न करने से परिवार में क्या प्रतिक्रिया हुई, उसका परदा न करना कहाँ तक उचित था, स्पष्ट कीजिए। [121/2]

उत्तर-
प्रभा राजेंद्र यादव द्वारा रचित सामाजिक व पारिवारिक उपन्यास 'सारा आकाश' की नायिका है। उसका चरित्र एक गरिमामयी, घरेलू, सुघड़ शिक्षिता व सुसंस्कृत नारी के रूप में दिखाया गया है। जिस काल का यह उपन्यास है। उस समाज में प्रभा का मैट्रिक पास होना एक विशेष उपलब्धि रखता है।

शिक्षिता होने के कारण प्रभा का थोथे मापदंडों और प्राणहीन रूढ़ियों या प्रथाओं में विश्वास नहीं है। वह 'परदा प्रथा' को भी इस प्रकार की एक थोथी प्रथा के रूप में देखती है। इसीलिए वह जब सुसराल आती है तो परदे की प्रथा को स्वीकार नहीं करती। परंतु उसके ससुर और समर के बाबूजी की विचारधारा रूढ़िवादी है। वे परंपरा से चली आ रही गली-सड़ी मान्यताओं को ओढ़े हुए हैं। उनके विचार उस काल के समाज की अंधी परंपराओं से मेल खाते हैं। इसमें एक विचार यह भी है कि युवा होते ही अपनी संतान का हर हाल में विवाह कर देना सबसे बड़ा पुण्य है। इसी सोच के कारण वे मुन्नी की पढ़ाई बीच में ही छुड़वाकर उसका विवाह कर देते हैं। समर भी उनकी इसी सोच का शिकार होता है। उसे छात्रावस्था में ही विवाह के कठिन बंधन में बाँध दिया जाता है।

बाबूजी पर्दे की प्रथा जैसी प्राणहीन रूढ़ियों का समर्थन करते हैं। इसीलिए अपनी बहू प्रभा को यदा-कदा इस बात को लेकर डाँटते रहते हैं कि वह घूँघट नहीं निकालती। उनके विचार देखिए-

"फिर बेटी और बहू में फर्क ही क्या रह गया? बेटी भी मुँह खोले बाल बिखेरे घूमती है और बहू को भी चिंता नहीं है कि पल्ला किधर जा रहा है।" वे प्रभा को छत पर दाल बीनने के लिए जाने से भी मना करते है।

परदे की प्रथा प्रभा के घर में बवाल मचा देती है। बाबूजी किसी न किसी बात पर बहूरानी प्रभा को परदे में रहने के लिए कोंचते रहते हैं। एक स्थल देखिए

“अरे, इससे परदा नहीं करती तो मत करो। छाती पर पत्थर रखके उसे भी सह लेंगे, लेकिन बेशर्मी की ऐसी हद तो मत करो। ऊपर जाकर सिर धोते समय तुम्हें दिखा नहीं कि लोग क्या कहेंगे? जाड़ों में धूप सेंकने के बहाने सभी तो ऊपर छतों पर चले जाते हैं। इधर-उधर ताक-झाँक करने में उनके बाप का क्या जाता है। यह मुन्नी भी इतनी बड़ी हो गई, इसे नहीं सूझा? बैठी-बैठी सिर पर पानी डाल रही थी…………” दूसरी ओर उनकी अपनी पुत्री मुन्नी विरोध पर उतर आती है। वह भी प्रभा की इस बात का समर्थन करती है कि घर में परदे की प्रथा का क्या काम? वह पिता का विरोध करती है और प्रभा भाभी के छत पर जाने, बाल धोने और सुखाने की आदत का समर्थन करती है। वह पिता से कहती है-

“बाबू जी तुम भी अनोखी बातें करते हो अब ऐसी तो ठंड है। तुमने तो राम-राम करके उल्टा सीधा पानी दो लोटे डाला, और नहाने का नाम करके चल दिए, पर हम लोगों का सिर कोई ऐसे धुलता है? दो घंटे लगते हैं। तब तक नीचे ऐसे जाड़े में कोई कैसे भीगे? हाथ में पानी लो, तो काटने को दौड़ता है। ऊपर छत पर धूप थी, अगर चली ही गई तो क्या ऐसी आफत आ गई?”

प्रभा का परदा न करना सर्वथा उचित था। वास्तव में यह समाज पुरातनपंथी सोच को छोड़ना नहीं चाहता। अनेक प्रथाएँ ऐसी हैं, जो सर्वथा निंदनीय व अर्थहीन हैं। परदे की प्रथा भी ऐसी ही एक प्रथा थी जो समाज में स्त्रियों पर बलपूर्वक लादी जाती थी। शिक्षित व सभ्य समाज में इस प्रकार के परदे की कोई आवश्यकता नहीं। आज स्त्री समाज में पुरुष के साथ कंधे से कंधा मिलाकर चल रही है। ऐसे आधुनिक समाज में उक्त
प्राणहीन प्रथाओं के लिए कोई भी स्थान नहीं है।

प्रश्न 12.
‘सारा आकाश’ उपन्यास के प्रमुख पात्र ‘समर’ का चरित्र-चित्रण कीजिए। [12]

उत्तर-
समर राजेंद्र यादव कृत उपन्यास ‘सारा आकाश’ का नायक है। उसके चरित्र में निम्नलिखित गुण पाए जाते
1. विवाहित छात्र- समर एक विवाहित छात्र है। वह अभी इंटर में पढ़ रहा है। परंतु उसका प्रभा से विवाह हो जाता है। जिस काल की कथावस्तु इस उपन्यास में है, उस काल में विवाह ही

प्रत्येक माता-पिता का चरम उद्देश्य हुआ करता था। वे अपने बच्चों का प्राय:छात्रावस्था में ही विवाह कर देते थे। समर की विवाह के संबंध में सहमति नहीं थी परंतु वह अपने माता-पिता की इच्छा का विरोध भी नहीं कर पाता। वह विवाह के संबंध में सोचता है

"इस समय तो ऐसा लगता है कि जैसे एक तेज बहाव है जो मुझे अपने साथ बहाए लिए जा रहा है। जाने कहाँ ले जाकर छोड़ेगा? लेकिन अब इस वर्तमान का क्या करूँ? बीच में आए इस मायाजाल और मोहिनी में अपने को फँस जाने दूं या इस झाड़ी से कतराकर निकल जाऊँ? जहाँ तक हो सकेगा मैं इसमें उलझूगा नहीं, यह मेरा निश्चय है। हे भगवान, इस परीक्षा के समय मेरी आत्मा को बल देना, मुझे दृढ़ता देना कि मैं झुक न जाऊँ.....कहीं मैं हार न जाऊँ।'?

2. अहंवादी- उपन्यासकार ने समर को एक अहंवादी पति के रूप में चित्रित किया है। वह प्रभा को न जाने क्यूँ एक निर्जीव वस्तु समझता है। उसके सामने जाते ही उसका अहं उसे झकझोरने लगता है और वह परंपरागत पुरुष की तरह अपने वर्चस्व के विषय में सोचने लगता है। सुहागरात के क्षणों में भी उसका पत्नी से न बोलना इसी अहं का परिचायक है। वह सोचता है- "मुझे तो आज एक बहुत बड़ा निश्चय करना है-परीक्षा का सबसे कठिन पेपर है। आज अगर फिसल गया तो संसार की कोई शक्ति मेरा उद्धार नहीं कर सकती और अगर आज ही निकल गया तो एक साथ सारे सिरदर्द से पीछा छूट जाएगा।" सुहागरात के अबोले से शुरू हुआ उसका अहं निरंतर चलता रहता है।

इस बीच प्रभा अपने मायके भी छह महीने तक रह आती है परंतु वह उसे लेने नहीं जाता। अंततः छोटे भाई को भेजा जाता है। समर का अंह इतना बड़ा तथा अकारण हिंसक हो जाता है कि वह प्रभा को किसी भी दशा में अपना जीवन-साथी मानने के लिए तैयार नहीं होता। वह सोचता है कि उसकी स्थिति सबसे अलग है"मेरा रास्ता हजारों लाखों लड़कों का रास्ता नहीं है। ऊपर से देखने में मैं चाहे जैसा लगूं, मैं उनसे हर हालत में भिन्न हूँ। मेरा भविष्य मेरे हाथों में है। मैं हर क्षण तलवार की धार पर चलता हूँ। बस जरासा अपने को साध लूँ। डगमगाऊं नहीं। मैंने हर समय अपने को इन लोगों से कितना ऊँचा उठा हुआ पाया है।

वह इतना अहंवादी है कि प्रभा को अपनी दासी से भी कम महत्त्व देता है। यह प्रवृत्ति उसे एक अहंकारी पति सिद्ध करती है। दाल में नमक अधिक होने के प्रसंग में भी वह ऐसा ही व्यवहार करता है। वास्तव में उसे शिक्षा ही ऐसी मिली थी कि पत्नी को दबाकर रखा जाए। वह सोचता है कि प्रभा उसके पैरों में पड़ी रहे

मैं तो सोचता था कि वह मेरे पाँवों पर झुक जाएगी तो मैं उसके दोनों कंधे पकड़ कर उठा लूंगा। यही तमीज और अदब सिखाया है घर वालों ने? उस वक्त तो बड़े गर्व से कहा था कि लड़की मैट्रिक तक
पढ़ी है।”

3. व्यावहारिक न होना – समर व्यवहार कुशल व्यक्ति नहीं है। उसमें अनुभव की बहुत कमी है। वह संबंधों में तालमेल बिठा पाना नहीं जानता। उसे परिवार में समरसता स्थापित करना नहीं आता। वह संयुक्त परिवार में रहता है। घर में अम्मा तथा बाबूजी है। बड़े भाई तथा भाभी हैं। पत्नी प्रभा के अतिरिक्त दुखद दांपत्य की प्रतीक बहन मुन्नी है। दो छोटे भाई भी हैं। इन सबमें व्यावहारिकता अपनाकर चलना आवश्यक था। परंतु वह इस दृष्टि से पूरे पूर्वार्ध में अयोग्य सिद्ध होता है। इसीलिए भाभी के बहकावे में आता रहता है और पत्नी प्रभा से दूर होता जाता है।

समर एक बार व्यवहार कुशल होने की बात सोचता भी है-

“हाँ मैं उससे कहूँगा, देखिए हम लोग काफी समझदार हैं। माँ-बाप जैसे भी हैं या जो भी कर सकते हैं, उन्होंने कर दिया, लेकिन अपना आगा-पीछा तो हमें ही देखना है। सबसे पहले तो हमें अपनी शिक्षा पूरी करनी होगी।”

परंतु प्रभा के सामने आते ही उसका दिमाग सातवें आसमान पर पहुँच जाता है। गणेश की मूर्ति से बर्तन माँजने के प्रसंग में तो वह थोड़ा-सा भी अनुभव नहीं दिखाता और भड़क उठता है। प्रभा कहती है कि उससे अज्ञानवश यह सब हो गया है। परंतु इसका अर्थ यह नहीं है कि कोई पशुपन पर उतर आए। समर उसके मुँह पर अचानक ही इतनी जोर से चाँटा मारात है कि पाँचों उंगलियाँ उभर कर छप जाती हैं। यही नहीं वह उसको गाली भी देता है कि “हरामजादी, यहाँ रहना है तो ढंग से रहो तथा बड़ी नास्तिक की बच्ची बनती है।” यह सत्य है कि समर को बाद में यह सोचकर बड़ा पश्चाताप होता है कि उसको प्रभा के साथ इस प्रकार पेश नहीं आना चाहिए था, किंतु उसके इस अव्यावहारिक क्रोध से प्रभा पर पाश्विक प्रहार तो हो ही चुका था।

4. संयुक्त परिवार की घुटन का शिकार – समर संयुक्त परिवार की घुटन का शिकार युवक है। उसे डर डर कर जीना पड़ता है। अम्मा के कटाक्ष, बाबूजी का आतंक, भाभी के व्यंग्य-बाण-सब उसे दबाते रहते हैं। वह पिता से फीस के 25 रु० माँगने पर इतना अपमान सहता है कि उसे आत्मग्लानि हो उठती है। अम्मा तब तक तो ठीक थी, जब तक वह प्रभा के प्रतिकूल था परंतु स्थिति बदलते ही वह भी समर की शत्रु हो जाती है। उसके कटाक्ष दूर-दूर तक मार करते हैं।

बाबूजी के सामने उसका इतिहास देखिए – "बाबूजी के सामने पड़ने से मैं हमेशा ही डरता रहा हूँ। यों इधर तीन-चार साल से उन्होंने हाथ नहीं उठाया, लेकिन शरीर पर पड़ी हुई पुरानी नीलें अभी भी ताजी हो आती हैं। और ये यादें ही जैसे उनके आतंक को दिन-दूना रात चौगुना बढ़ाया करती हैं। किस समय वे क्या कर बैठेंगे, कोई ठिकाना नहीं; जिन दिनों वे मुझे मारते थे उन दिनों तो एक अल्हड़ और जिद्दी निश्चिन्तता रहती थी कि ज्यादा-सेज्यादा पीट ही तो देंगे।

समर की भाभी संयुक्त परिवार का एक सशक्त स्तंभ है। वह उस पर अलग-से दबदबा बनाए हुए हैं। वह उसे सहज नहीं होने देती। निरंतर प्रभा के विरुद्ध भड़काना उसकी आदत बन चुकी है –

"लो, सुनो लालाजी की बातें ! मैं क्या उसके पेट में घुस के देख आई, सुनी-सुनाई बात मैंने कह दी।" फिर गहरी साँस ली, "ओफ्फो, हद है घमंड की भी! आने-जाने के नाम खाक-धूल नहीं और घमंड ऐसा! कसम से कहती हूँ, मैं तो इतनी बड़ी हो गई, ऐसी घमंडिन औरत अपनी जिंदगी में नहीं देखी। बोलो, गुन-करतब हों तो नखरे भी सहे जाएँगे, कोरे नखरे कौन उठाएगा? असल में उन्होंने लेना चाहा पढ़ाई और खूबसूरती के रोब में, सो ऐसी राजा इंदर की परी भी नहीं लगी।"

5. आत्मविश्लेषण – समर का चरित्र उपन्यास के दो अलग-अलग भागों में अलग-अलग प्रकृति का है। पहले भाग में वह एक उदंड और क्रोधी व अहंवादी पुरुष दिखाई देता है परंतु उत्तरार्ध में आत्मविश्लेषण के कारण परिवर्तित प्रतीत होता है। वह प्रभा के साथ किए गए व्यवहार की समीक्षा करता है। उपन्यासकार के शब्दों में – "आज अदालत में खड़ा करके कोई मुझसे पूछे कि सुहागरात के दिन तुम अपनी पत्नी से क्यों नहीं बोले थे? क्या केवल इसीलिए कि वह तुम्हें देखते ही गठरी बनकर नहीं बैठ गई थी और यों ही खड़ी रही थी? या सिर्फ इसलिए कि तुम्हारी महत्त्वाकांक्षाएँ बहुत ऊँची थी, और तुम नारी को उनमें बाधक मानते थे कि वह तुम्हारी इच्छा के विरुद्ध कर दिया गया था? .... छि: यह भी कोई ठोस कारण है, न बोलने का?"

6. संघर्षशील – उपन्यास में समर को संघर्षशील दिखाया गया है। वह भारतीय संस्कृति में विश्वास रखने वाला युवक है और कर्म को ही धर्म मानता है। पारिवारिक दायित्व का स्मरण आते ही उसमें परिवर्तन आने लगता है। इसीलिए नौकरी के लिए हाथ-पैर मारने लगता है। उसे प्रभा के प्रति अपने उत्तरदायित्व का भी अहसास होता है इसीलिए नौकरी लगते ही सबसे पहला ध्यान प्रभा की तार-तार हुई धोती पर जाता है। वह दिवाकर से 20 रु० उधार लेकर उसके लिए नई धोती लाता है।

7. संवेदनशील – समर एक संवेदनशील युवक है। मुन्नी के प्रसंग में उसका आक्रोश इसी संवेदनशीलता का प्रतीक है। प्रेस में अधिक रुपयों पर हस्ताक्षर करवाने और कम रुपए देने का मामला भी संवेदनशीलता का है। प्रभा के प्रति उसका बदलता व्यवहार भी उसके मन में भरे करुणा के सागर की ओर संकेत करता है।

इस प्रकार उपन्यासकार ने उपन्यास के दो भागों में समर को दो अलग प्रकार के व्यक्तित्व का स्वामी बताया है। उत्तरदायित्व समझ में आने पर उसमें व्यवहारिकता भी आ जाती है।

आषाढ़ का एक दिन

प्रश्न 13.
तुम जिसे भावना कहती हो वह केवल छलना और आत्म-प्रवंचना है। ... भावना में भावना का वरण किया है! ...... मैं पूछती हूँ भावना में भावना का वरण क्या होता है?

(i) उक्त कथन नाटक के किस अंक से लिया गया है तथा उक्त कथन किसने, किससे कहा है? [17]
(ii) उक्त कथन किस सन्दर्भ में कहा गया है? स्पष्ट कीजिए।
(iii) उक्त कथन के माध्यम से वक्ता श्रोता को क्या समझाना चाहती है?
(iv) वक्ता की चारित्रिक विशेषताएँ लिखिए।

उत्तर-
(i) उक्त संवाद मोहन राकेश कृत नाटक 'आषाढ़ का एक दिन' के प्रथम अंक से लिया गया है। प्रस्तुत कथन अम्बिका अपनी पुत्री मल्लिका से कहती है।

(ii) उक्त कथन मल्लिका और कालिदास के प्रेम-प्रसंग को आधार बनाकर कहा गया है। मल्लिका कालिदास से भावना के स्तर पर बँधे होने की बात करती है। वह कहती है कि उसने भावना में एक भावना का वरण किया है। उसके लिए वह संबंध अन्य सभी संबंधों से बड़ा है।

(iii) उक्त संवाद द्वारा अम्बिका अपनी पुत्री मल्लिका को समझाना चाहती है कि कालिदास के लिए उसकी यह भावना एक प्रवंचना है। वह अपने अनुभव द्वारा पुत्री को लोक- व्यवहार समझाना चाहती है। वह कहना चाहती है कि इस प्रकार की भावनाएँ जीवन की आवश्यकताओं की पूर्ति नहीं कर पातीं।

(iv) वक्ता अम्बिका एक ममतामयी माँ है। उसकी दृष्टि व्यावहारिक है। उसका सामाजिक मानदंडों और परंपराओं के प्रति मोह है। उसकी दूरदृष्टि और अनुभव नाटक में सत्य प्रमाणित होता है। वह मनोविज्ञान जानवी है। वह वत्सल भावना व लोकाचार से प्रेरित होकर पुत्री को कालिदास के प्रति अंध-प्रेम से रोकना चाहती है। परंतु इतने कष्टों से पाली गई मल्लिका उसकी सीख को उपेक्षित कर देती है और असीम कष्ट भोगती है।

प्रश्न 14.
'आषाढ़ का एक दिन' नाटक के आधार पर कालिदास का चरित्र-चित्रण कीजिए [12 1/2]

उत्तर-
कालिदास मोहन राकेश द्वारा रचित प्रसिद्ध ऐतिहासिक नाटक 'आषाढ़ का एक दिन' का नायक है। उसको नाटककार ने निम्नलिखित विशेषताओं द्वारा मंडित करके प्रस्तुत किया है-

1. वंद्वग्रस्त कवि- कालिदास एक कवि है। उसके चरित्र की प्रमुख विशेषता उसका अंतर्वंद्व है। सबसे पहला अंतर्वंद्व मल्लिका के रूप में प्राप्त होता है। वह स्वयं सर्वहारा व अभावग्रस्त है। अपनी प्रेमिका मल्लिका के साथ घर बसाना चाहता है परंतु विपन्नता रास्ते में आ जाती है और उसके द्वंद्व सामने आ खड़ा होता है।

दूसरा द्वंद्व उज्जयिनी जाकर कवि बनने या न बनने का है।

उज्जयिनी से निमंत्रण आने पर यह दवंद्व और अधिक मुखरित हो उठता है। वह भाग कर जगदंबा के मंदिर में जा छिपता है। वह सोचता है क्या वह मल्लिका से ग्राम प्रांतर से, अपी जन्म-भूमि से दूर चला जाए। क्या इससे उसकी प्रेरणा तो न छिन जाएगी? क्या वह वहाँ जाकर साहित्य सर्जना कर सकेगा?'नई भूमि सुखा भी तो दे सकती है?-और उस जीवन की अपनी अपेक्षाएँ भी होंगी। फिर भी कई-कई आशंकाएं उठती हैं। मुझे हृदय में उत्साह का अनुभव नहीं होता.....'

इसी द्वंद्व के कारण वह काश्मीर जाता हुआ मल्लिका से मिलने नहीं आता। मिलने आता तो फिर क्या वह लौट पाता? संभवतः नहीं? अपनी स्थिति का स्पष्टीकरण करता हुआ वह कहता है- "मैं तब तुम से मिलने के लिए नहीं आया, क्योंकि भय था तुम्हारी आँखें मेरे अस्थिर मन को और अस्थिर कर देंगी। मैं उन से बचना चाहता था।'?

2. करुण हृदय- कालिदास के व्यक्तित्व में करुणा, कोमलता और सहृदयता है। यही कारण है कि नाटक के प्रारंभ में हम उसे हिरण के बच्चे के प्रति करुणा से भरा हुआ पाते हैं। वह घायल हिरण के बच्चे को गोद में लिए मल्लिका के घर में आता है। वह कहता है-"न जाने इसके रूई जैसे कोमल शरीर पर उससे बाण छोड़ते बना कैसे?" फिर हिरण-शावक से बातें करता हुआ कहता है-"हम जिएँगे हिरण शावक। जिएंगे न! एक बाण से आहत होकर हम प्राण नहीं देंगे। हमारा शरीर कोमल है तो क्या हुआ? हम पीड़ा सह सकते हैं............" कालिदास हिरण-शावक और स्वयं में कुछ अंतर नही समझते ...." हम सोएँगे? हाँ, हम थोड़ी देर सो लेंगे तो हमारी पीड़ा दूर हो जाएगी।"

कालिदास के भीतर छिपी करुणा व कोमलता को मल्लिका भी अच्छी तरह जानती है। इसीलिए जब मातुल कालिदास के पीछे तलवार पर हाथ रखकर जाने को कहता है, तो उससे कहती है "ठहरो राजपुरुष! हिरण-शावक के लिए हठ-मत करो। तुम्हारे लिए प्रश्न अधिकार का है, उनके लिए संवेदना का। कालिदास निःशस्त्र होते हुए भी तुम्हारे शस्त्र की चिंता नहीं करेंगे।"

3. प्रेम-भावना- नाटककार ने कालिदास को एक प्रगाढ़ प्रेमी के रूप में दिखाया है। उसके हृदय में मल्लिका के लिए असीम व एकनिष्ठं प्रेम है। प्रेमपाश में बंधा होने के कारण ही वह उज्जयिनी नहीं जाना चाहता। मल्लिका उसे प्रेरित करके भेज तो देती है परंतु वहाँ जाकर भी वह ग्राम-प्रांतर में ही विचरण करने की कल्पना और मल्लिका की स्मृतियों में खोया रहता है। प्रियंगुमंजरी इस प्रेम की प्रगाढ़ता की गवाही देते हुए कहती है कि कालिदास 'मेघदूत' लिखते हुए उसे ही स्मरण किया करते थे। स्वयं कालिदास कहता है-"एक आकर्षण सदा मुझे इस सूत्र की ओर खींचता था जिसे तोड़ कर मैं यहाँ से गया था। यहाँ की एक-एक वस्तु में जो आत्मीयता थी वह यहाँ से जाकर मुझे कहीं नहीं मिली .... और तुम्हारी आँखें। जाने के दिन तुम्हारी आँखों का जो रूप देखा था वह आज तक मेरी स्मृति में अंकित है।"

कालिदास ने जो भी लिखा, मल्लिका के प्रेम को सामने रख कर ही लिखा "........... मैंने जब-जब लिखने का प्रयत्न किया तुम्हारे और अपने जीवन के इतिहास को फिर-फिर दोहराया।"

4. राजकवि- कालिदास एक श्रेष्ठ कवि है परंतु उसे राजकवि बनने का अवसर दिया जाता है तो वह दुविधा में पड़ जाता है। उज्जयिनी में राजकवि के रूप में भी उसका जीवन वंव में रहता है। उसकी कवि-प्रतिभा का सहज और स्वाभाविक रूप दब जाता है। नाटककार बताना चाहता है कि इस प्रकार के राज्याश्रय में प्रायः साहित्यकारों की सहज प्रतिभा कुंठित हो जाती है।

5. प्रकृति-प्रेम- कालिदास मूलतः एक कवि रूप में चित्रित हुआ है। वह प्राकृतिक संपदा में विचरने वाला कवि है। उसकी रचनाएँ ऋतु संहार, मेघदूत आदि इसी प्रकृति-प्रेम की ओर संकेत करती हैं। कालिदास स्वयं स्वीकार करता है-"मैं अनुभव करता हूँ कि यह ग्राम-प्रांतर मेरी वास्तविक भूमि है। मैं कई सूत्रों से इस भूमि से जुड़ा हूँ। उन सूत्रों में तुम हो, यह आकाश और ये मेघ हैं, यहाँ की हरियाली है, हिरणों के बच्चे हैं, पशुपाल हैं।"

6. अहं एवं व्यक्ति-चेतना-मोहन राकेश के साहित्य के कई पात्रों में अहं और व्यक्ति-चेतना पाई जाती है। कालिदास भी अपवाद नहीं है। वह अहं की सजीव मूर्ति है। वह उज्जयिनी जाकर अपनी व्यक्तिवादी चेतना का अनुभव करता है। वह मल्लिका के सामने स्वीकार करता है-"मन में कहीं यह आशंका थी कि वह वातावरण मुझे छा लेगा और मेरे जीवन की दिशा बदल देगा और यह शंका निराधार नहीं थी।" इस प्रकार कालिदास का चरित्र प्रवृत्तियों की ओर संकेत करता है।

प्रश्न 15.

आषाढ़ का एक दिन' शीर्षक नाटक ऐतिहासिक होते हुए भी आधुनिक समस्याओं का आंकलन प्रतीत होता है।-व्याख्या कीजिए। [12]

उत्तर-

'आषाढ़ का एक दिन' हिंदी के प्रयोगधर्मी नाटककार मोहन राकेश द्वारा लिखित है। यह एक यथार्थवादी नाटक है। इसमें ऐतिहासिक परिपार्श्व में आधुनिक जीवन के भाव-बोध को व्यंजित किया गया है। कालिदास की कहानी आधुनिक साहित्यकार से बिल्कुल भी भिन्न प्रतीत नहीं होती।

आलोचक स्वीकार करते हैं कि कालिदास के साथ समकालीन अनुभव के और भी कई संदर्भ इस नाटक में हैं। ये संदर्भ इसे एकाधिक स्तर पर रोचक बनाते हैं। उसका संघर्ष, कला और प्रेम, सर्जनशील व्यक्ति और परिवेश, भावना और कर्म, कलाकार और राज्याश्रय आदि कई स्तरों को स्पर्श करता है। काल के आयाम को बड़ी रोचकता और तीव्रता के साथ नाट्य रूप दिया गया है।

ऊपरी तौर पर इस नाटक में कालिदास की कहानी बताई गई प्रतीत होती है, परंतु वास्तविकता कुछ और है। नाटककार ने इस नाटक में कथा-तंत्र रचते समय ऐतिहासिक वस्तु-योजना को केवल आधार के रूप में रखा है। वास्तव में यहाँ पर कालिदासकालीन परिस्थितियों के माध्यम से आधुनिक समस्याओं का समसामयिक रूप में विवेचन हुआ है। ऐतिहासिक कथानक के आधार

पर आधुनिक समस्याओं को प्रस्तुत करना कोई नई बात नहीं है। यही कार्य प्रसाद जी भी अपने नाटकों के द्वारा कर चुके हैं। मोहन राकेश ने भी 'आषाढ़ का एक दिन' के द्वारा यही कार्य किया है। प्रसाद जी ने अपने नाटकों की विषय-वस्तु की ऐतिहासिकता पर भी विशेष ध्यान दिया है। परंतु मोहन राकेश ने ऐतिहासिक तथ्यों को महत्त्व नहीं दिया। उन्होंने केवल पात्र एवं वातावरण ही ऐतिहासिक चुने हैं, शेष सभी कुछ आधुनिक है।

स्थितियाँ प्राचीन हैं परंतु संदर्भ आधुनिक है। कालिदास भले ही मल्लिका से प्रेम करता है परंतु मूलतः वह है एक कवि ही। उसका एकमात्र और चरम मूल्य साहित्य की रचना करना है। पूरे नाटक में उसका यही अंतर्वंद्व दिखाई देता है। यही कारण है कि उज्जयिनी जाकर वह मल्लिका और ग्राम-प्रदेश को भूल जाता है। उज्जयिनी में कालिदास की जीवन-शैली बदल जाती है उसका जीवन उसका अपना जीवन नहीं रहता। प्रियंगुमंजरी से विवाह करने की विवशता, विलासिता में पूरित वैभवपूर्ण जीवन और सृजन शक्ति पर छाए संकट के बादल इसी ओर संकेत करते हैं। स्थिति का ज्ञान होने पर कालिदास स्वयं कहता है-"अधिकार मिला, सम्मान बहुत मिला, जो कुछ मैंने लिखा उसकी प्रतिलिपियाँ देश भर में पहुँच गईं परंतु मैं सुखी नहीं हुआ। किसी और के लिए वही वातावरण और जीवन स्वाभाविक हो सकता था, मेरे लिए नहीं था। एक राज्याधिकारी का कार्यक्षेत्र मेरे कार्यक्षेत्र से भिन्न था।

मुझे बार-बार अनुभव होता है कि मैंने प्रभुता और सुविधा के मोह से उस क्षेत्र में अनधिकार प्रवेश किया है और जिस विशाल क्षेत्र में मुझे रहना चाहिए था उससे हट आया हूँ।" राज्याश्रय और राजनीतिक वातावरण में साहित्य-सृजन की गति कुंठित हो जाती है। कालिदास के कथनानुसार-"लोग सोचते हैं, मैंने उस जीवन और वातावरण में रहकर बहुत कुछ लिखा है। परंतु मैं जानता हूँ कि मैंने वहाँ रहकर कुछ भी नहीं लिखा। जो कुछ लिखा है यहाँ के जीवन का ही संचय था।" यह ऐतिहासिक कालिदास की नहीं आधुनिक कालिदास की तस्वीर है। आज महानगरों में उच्च पदों पर आसीन साहित्यकारों की भी यही स्थिति है। वे अपनी आत्मा के सच्चे आज्ञाकारी बनकर उच्च जीवन मूल्यों का जीवन जीते हुए सृजन करना चाहते हैं। परंतु राज्याश्रय का दबाव उन्हें ऐसा करने नहीं देता। वे राजाज्ञा के समक्ष कठपुतली नज़र आते हैं।

इस प्रकार स्पष्ट होता है कि नाटककार के नाट्य लेखन का ताना-बाना भले ही इतिहास से लिया हो परंतु उसकी साज-सज्जा और आत्मा अपनी कल्पना से सजाई है। उसमें आधुनिक नर-नारी संबंधों की समस्या भी उतनी ही प्रबल है जितनी राज्याश्रय की। अस्तित्व की रक्षा करने में कालिदास अंततः असमर्थ-सा दिखाई देता है।